ज्ञानामृत

फरवरी, 1987
वर्ष 22 ❋ अंक 8
मूल्य 1.35

ओम निवास से

ओमशान्ति भवन तक

स्वर्ण जयंति
से
स्वर्णयुग

आबू पर्वत-हरियाणा के पी. डब्ल्यू डी. मंत्री भ्राता मूलचंद जी, दादी प्रकाशमणि जी, दादी जानकी जी तथा ब्र.कु. मोहिनी जी से मिलते हुए।

गामदेवी (बम्बई) डॉ. इनामदार, निदेशक इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, महाराष्ट्र राज्य एक अध्यात्मिक गोष्टी में सम्बोधन करते हुए।

आबू पर्वत-देहली राज्य के मुख्य सचिव भ्राता के.के. माथुर परिवार सहित ब्र.कु. डॉ. निर्मला तथा ब्र.कु. मृत्युञ्जय के साथ।

कटक (कॉलेज एक्स्चायर) द्वारा आयोजित आर्ट कम्पीटीशन में विजेता को सर्टीफिकेट देते हुए ब्र.कु. जगदीशचन्द्र जी।

इंदौर १८ जनवरी स्मृति दिवस के उपलक्ष्य में आयोजित 'सद्भावना समारोह' का उद्घाटन करते हुए म.प्र. विधानसभा उपाध्यक्ष भ्राता कन्हैयालाल यादव जी।

हरिनगर (दिल्ली) 'हिन्दुस्तान' के सम्पादक भ्राता विनोद कुमार मिश्रा ब्र.कु. शुक्ला, ब्र.कु. सुन्दरलाल तथा अन्य ब्र.कु. भाई-बहिनों के साथ।

आबू पर्वत-राजयोगिनी दादी जानकी जी, भ्राता एस.वी. मलकिमट, मुख्य न्यायाधीश केरल उच्च-न्यायालय को ईश्वरीय सौगात देते हुए।

कृष्णानगर (देहली) में आयोजित 'विश्व एकता स्वर्णिम' मेले के उद्घाटन अवसर पर ब्र०कु० आशा उपमहापौर बहिन अंजना कंवर से ज्ञान वार्तालाप करते हुए।

आबू पर्वत-हिमाचल प्रदेश विधानसभा के सदस्य ओमशान्ति भवन, के समक्ष दिखाई दे रहे हैं।

राजकोट सेवाकेंद्र द्वारा गोंडल उपसेवाकेंद्र के उद्घाटन समारोह में प्रवचन करती हुई ब्र.कु. सरला जी। उनके दाएं विराजमान हैं दादी जानकी जी तथा ब्र.कु. भारती जी।

◄ **कृष्णानगर (देहली)** में हुए 'विश्व-एकता स्वर्णिम मेला' का उद्घाटन दृश्य। देहली की उपमहापौर बहन अंजना कंवर, ब्र.कु. हृदयमोहिनी जी, ब्र.कु. कमलमणि जी तथा अन्य दीप प्रज्ज्वलित करते हुए।

चंडीगढ़ में आयोजित 'शांति तथा मानव अस्तित्व' सम्मेलन में प्रवचन करती हुई ब्र.कु. दादी जानकी जी।

◄ **कटक** में स्वर्णिम युग शांति मेले के उद्घाटन अवसर पर आयोजित पत्रकार सम्मेलन में सम्बोधन करती हुई ब्र.कु. दादी प्रकाशमणि जी।

भुवनेश्वर ब्र.कु. दादी सन्तरी जी उड़ीसा की हरिजन तथा ट्राइबल कल्याण मन्त्री बहिन परमा पुजारी को श्री लक्ष्मी नारायण की चित्र भेंट करती हुई।

◄ **उदयपुर** में १८ जनवरी स्मृति दिवस पर सार्वजनिक कार्यक्रम में मंच पर (बाएं से) उदयपुर क्षेत्र की विधायिका डॉ. गिरजा व्यास, मेवाड़ महाराणा महेंद्र सिंह जी तथा ब्र.कु. निर्मला विराजमान हैं।

अमृत-सूची

१. ब्रह्माकुमारी संस्थान के स्वर्ण जयंति महोत्सव का राष्ट्रपति उद्घाटन करेंगे। १
२. स्वर्णिम युग के लिये स्वर्णिम-निमंत्रण २
३. विश्व की मुख्य समस्याएं और उनका आध्यात्मिक हल ! ३
४. पर्यावरण प्रदूषण, जनसंख्या की द्रुत वृद्धि, रंगभेद और जातिवाद तथा नशीले पदार्थों के सेवन की समस्याएं और उनका आध्यात्मिक हल ८
५. भ्रष्टाचार, अपराध, साम्राज्यवादी प्रवृत्तियों तथा धार्मिक असहिष्णुता और उग्रवाद की समस्याओं का आध्यात्मिक हल १२
६. सम्पर्क माध्यमों का दुरुपयोग; महिलाओं के प्रति भेदभाव, तनाव तथा तनाव से सम्बंधित रोग और युवक में आध्यात्मिकता के अभाव का हल १४
७. ऊर्जा का अति उपभोग, विज्ञान का गलत उपयोग, मानव-अधिकार तथा सामाजिक एवं पारिवारिक विघटन रूपी समस्याओं का आध्यात्मिक हल १७
८. प्रभु-मिलन के 50 वर्ष २०
९. नगरों का विस्तार, इतिहास का पूर्वाग्रह-युक्त लेखन, बढ़ती हुई मंहगाई, नैतिक तथा आध्यात्मिक अशिक्षा रूपी समस्याओं का हल २२
१०. आध्यात्मिक हल विधि: निष्कर्ष और टिप्पणी २७
११. सतयुगी श्रेष्ठ राज्यसत्ता के आधारभूत सिद्धांत ३०
१२. आध्यात्मिक सेवा-समाचार ३२

ब्रह्माकुमारी संस्थान के स्वर्ण जयंति महोत्सव का राष्ट्रपति उद्घाटन करेंगे

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय अपने स्वर्ण जयंती वर्ष के समापन के अवसर पर देहली और माउंट आबू में अंतर्राष्ट्रीय स्तर के चार सम्मेलन कर रहा है। देहली में 6 फरवरी को सायंकाल जो महासम्मेलन प्रसिद्ध इंदिरा गांधी स्टेडियम में होगा, उसका उद्घाटन राष्ट्रपति ज्ञानी जैल सिंह जी करेंगे। इस अवसर पर सतयुग अथवा स्वर्णिम युग के शुभागमन के विषय पर चर्चा होगी और संस्थान की मुख्य प्रशासिका एक महत्वपूर्ण वक्तव्य भी प्रस्तुत करेंगी। इस महासम्मेलन में फिलिपीन के उपराष्ट्रपति एवं विदेश मंत्री की धर्मपत्नी श्रीमती सेलिया दयाज़ लारेल जो कि वहां कई समाज-सेवी संस्थाओं की अग्रगण्य नेता हैं, भारत के उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश एस. नटराजन तथा भूतपूर्व न्यायाधीश कृष्णा अय्यर, केंद्रीय मंत्रालय में विमानन एवं उड्डयन मंत्री जगदीश टाइटलर, देहली के महानगर परिषद के कार्यकारी पार्षद कुलानंद भारतीय, देहली नगरनिगम की उपमहापौर बहन अंजना कंवर तथा अन्य गणमान्य व्यक्तियों ने सम्मिलित होना स्वीकार किया है। धार्मिक गीत-संगीत जगत के प्रसिद्ध गायक अनूप जलोटा तथा उनकी मंडली इस अवसर पर दिव्य गीत प्रस्तुत करेगी।

आबू में विश्वशांति महासम्मेलन

10 फरवरी को माउंट आबू में गुजरात के राज्यपाल आर.के. त्रिवेदी जी विश्वशांति महासम्मेलन का उद्घाटन करेंगे। इस महासम्मेलन में इंग्लैंड के भूतपूर्व यातायात मंत्री और स्वास्थ्य एवं

समाज सुरक्षा के राज्य मंत्री लार्ड एनलस, जो वर्तमान समय हाउस ऑफ लार्डस के सदस्य हैं और संयुक्त राष्ट्र एसोसिएशन के अध्यक्ष हैं, तथा जम्मू और कश्मीर के मुख्यमंत्री, डॉ. फारूक अब्दुल्ला, उड़ीसा के गवर्नर भ्राता बी.एन. पांडे, राजस्थान उच्च न्यायालय के न्यायाधीश एस.के. मेहता, गुजरात के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश ए.एस. कुरेशी, बोकारो स्टील प्लांट के प्रबन्ध निर्देशक एस.आर. रामकृष्ण, उत्तर प्रदेश के वित्त आयोग के प्रबंध निदेशक बी.बी. सिन्हा, इंडियन यूनिवर्सिटीज़ एसोसिएशन के प्रधान चित्ती बाबू, राजस्थान विश्वविद्यालय के पत्राचार पाठ्यक्रम के निदेशक के.एल. कमल आदि भी विभिन्न कार्यशालाओं तथा अधिवेशनों में भाग लेंगे। इस महासम्मेलन में विधिवेत्ताओं, शिक्षाविदों, प्रशासन-अधिकारियों, वैज्ञानिकों आदि की भी कार्यशालाएं होंगी। इस महासम्मेलन में एक स्नेह-सम्पन्न, न्याययुक्त और अपराध-रहित समाज के निर्माण के विषय में तथा नई शताब्दी के लिए तैयारी करने के विषय में आध्यात्मिक शिक्षा और सहज राजयोग के अभ्यास पर चर्चा होगी।

(शेष पृष्ठ २ पर)

सम्पादकीय

स्वर्णिम युग के लिए स्वर्णिम निमंत्रण

इस मास प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय की स्वर्णिम जयंति का समापन समारोह हो रहा है। इस ईश्वरीय विश्वविद्यालय के आधार रूप मन्तव्यों में से एक मन्तव्य यह है कि अब कलियुग जा रहा है और सतयुग आने वाला है। और कि परमपिता परमात्मा का यह कार्य 'अप्रगट रूप' में हो रहा है। हम सभी—ब्रह्माकुमार और ब्रह्माकुमारियों—लाखों की संख्या में इन दोनों बातों को अपने प्रथम विश्वास (foremost belief) के रूप में धारण करके चल रहे हैं । स्वयं अव्यक्त अथवा निराकार परमात्मा की आज्ञा का पालन करते हुए ही हम विवेकयुक्त रीति-से अपने जीवन को पवित्र एवं योगयुक्त बनाते हुए सतयुग की पुन: स्थापना के श्रेष्ठ कर्तव्य में दिन-रात लगे हुए हैं । हम जानते हैं कि बहुत-से लोग हमारी इन घोषणाओं पर विश्वास नहीं करते और कई तो इन्हें सुनने को भी तैयार नहीं होते । परंतु हम उनकी इस प्रतिक्रिया से निराश होने वाले नहीं हैं । हमने सतयुग की स्थापना के ईश्वरीय कार्य में निमित्त बनने का बीड़ा उठाया हुआ है । हम पवित्रता के झंडे को अवश्य ही कायम रखेंगे चाहे हमें कितनी मुसीबतों का सामना क्यों न करना पड़े।

अन: स्वर्ण जयंति के शुभ अवसर पर हम पुन: अपने दृढ़-विश्वासों को अटल रूप से क्रियान्वित करने के व्रत का उद्घोष करते हैं । हम संसार के सामने पुन: यह शंख-ध्वनि करना चाहते हैं कि सुख-शांति, प्रेम-अहिंसा-पवित्रता वाली सतयुगी सृष्टि की स्थापना का सूत्रपात स्वयं परमपिता परमात्मा ने किया है और वह कार्य अब द्रुत गति लेता जा रहा है—कोई इस बात को माने या न माने !

हमारी यह घोषणा और इसके आधारगत् मन्तव्य अंधविश्वास पर नहीं टिके हुए हैं, न ही सतयुग के शुभागमन की घोषणा निराधार है। स्वयं परमपिता परमात्मा से हमें प्रजापिता ब्रह्मा के साकार माध्यम द्वारा जो तथ्य और प्रमाण विदित हुए हैं, वे विवेक-संगत, युक्तियुक्त, अकाट्य और अदम्य हैं । जो कोई भी दुराग्रह छोड़कर उन्हें समझने की कोशिश करता है, वह जीवन में इनको पाकर धन्य-धन्य हो जाता है।

सहज राजयोग के अभ्यास की जो विधि हमें परमपिता परमात्मा ने समझायी है, वह शाश्वत एवं सार्वभौम सत्यों पर आधारित है और जीवन में शांति, आनंद, ईश्वरीय प्रेम, संतोष और पवित्रता की सुगंधि भर देने वाली है। वह हिंदू, मुसलमान, सिख-ईसाई, भारतीय और विदेशी सभी के लिये है क्योंकि वह सभी 'आत्माओं' के लिये है ।

स्वर्ण जयंति के स्वर्णावसर पर स्वर्ण युग का आह्वान करते हुए हम सभी आत्माओं की हित-भावना से उन्हें ईश्वरीय ज्ञान, सहज राजयोग और दिव्य-गुणों के भंडार रूप ईश्वरीय विरासत को प्राप्त करने के लिए उन्हें आमंत्रित करते हैं।

जगदीश

(पृष्ठ १ का शेष)

आबू में अंतर्राष्ट्रीय राजस्थानी सम्मेलन

माउंट आबू में ही दिनांक 12 से 14 फरवरी तक राजस्थानी सम्मेलन होगा। इसके संरक्षकों में राजस्थान के बहुत से प्रमुख व्यक्ति शामिल हैं जिनमें कई इंडस्ट्रीज़ के अध्यक्ष और कलकत्ता के प्रसिद्ध न्यायविद पी.डी.एच. सिंह का, और उद्योगपति एस.एन. खेतान के नाम उल्लेखनीय हैं। इस सम्मेलन में राष्ट्रीय एकता और नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों की पुनर्स्थापना के विषय पर चर्चा होगी। राजस्थान के कई उद्योगपति जो राजस्थान से बाहर अन्य प्रदेशों में बसे हुए हैं, भी इसमें भाग लेंगे। भूतपूर्व संसद सदस्य पद्मश्री लक्ष्मी कुमारी चूड़ावत, राजस्थान विधानसभा के सदस्य डॉ. गिरिज़ा व्यास, प्रसिद्ध उद्योगपति एवं व्यापारी जुगल किशोर झुनझुनवाला और श्याम सुंदर अग्रवाल भी इसमें भाग लेंगे।

आबू में अंतर्राष्ट्रीय सर्वांगीण स्वास्थ्य सम्मेलन

आबू के ओमशांति भवन में यह ईश्वरीय विश्वविद्यालय तथा राजयोग शिक्षा एवं अनुसंधान फाउंडेशन 15 से 17 फरवरी तक एक अंतर्राष्ट्रीय सर्वांगीण स्वास्थ्य सम्मेलन कर रहे हैं जिसका उद्घाटन केंद्रीय सरकार की राज्य स्वास्थ्य मंत्री बहन सरोज खापरडे करेंगी। सम्मेलन में भाग लेने वाले अन्य गणमान्य व्यक्तियों में कर्नाटक के स्वास्थ्य मंत्री एच.टी. कृष्णाप्पा, राजस्थान के स्वास्थ्य मंत्री हीरालाल देवपुरा, महाराष्ट्र की स्वास्थ्य मंत्री श्रीमती रजनी सातव, तथा भूतपूर्व स्वास्थ्य मंत्री डॉ. ललिता राव, हिमाचल प्रदेश के राज्य स्वास्थ्य मंत्री कौल सिंह ठाकुर, तथा जम्मू और कश्मीर के स्वास्थ्य मंत्री के नाम उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त बरकले हालीस्टिक हैल्थ क्लीनिक के डॉ. जान डेरी, अमरीका के डॉ. एरोल वालकाट तथा डॉ. चार्ल्स नोवासेहक, इंडियन काउंसिल ऑफ मैडीकल रिसर्च, नयी दिल्ली के निदेशक डॉ. दत्ता बानिक, बम्बई के जसलोक हस्पताल के संयुक्त निदेशक डॉ. आर.डी. लेले, देहली के लोकनायक जयप्रकाश नारायण हस्पताल के मैडीकल सुपरिन्टेन्डेन्ट डॉ. के.के. अग्रवाल, प. जर्मनी की मनोचिकित्सक डॉ. हाइडी फिटकऊ तथा अन्य बहुत-से प्रसिद्ध डॉ. तथा मैडीकल कालेजों के प्रोफेसर सम्मिलित हैं। इस कॉफ्रेंस में तनाव, मद्यपान, धूम्रपान, मादक-पदार्थों के सेवन, एड्स, भक्ष्याभक्ष्य आदि-आदि विषयों पर चर्चा होगी

विश्व की मुख्य समस्याएं और उनका आध्यात्मिक हल

जब हम यह घोषणा करते हैं कि सतयुग आ रहा है तो कुछ लोग कहते हैं कि अभी तो विश्व में अनेकानेक समस्याएं और दु:ख हैं; तब सतयुग के आने की सम्भावना ही कहां है। अन्य लोग कहते हैं कि आध्यात्मिक ज्ञान और सहज राजयोग एक व्यक्ति को सुख-शांति देने के लिए निमित्त हो सकते हैं परंतु उनसे विश्व की समस्याओं का भला कैसे हल हो सकता है ?

स्वर्ण जयंति के अवसर पर विश्व की चौबीस मुख्य समस्याओं की चर्चा करते हुए इस अंक में बताया गया है कि कैसे उन सभी समस्याओं की उत्पत्ति किसी-न-किसी मानवीय मूल्य या दिव्य-गुणों की कमी के कारण है। विश्व की चार-चार समस्याओं पर यहां छह लेख हैं। अंत में उन लेखों पर समन्वित टिप्पणी सम्पादक द्वारा दी गयी है।

जब हम विश्व की परिस्थिति के संपूर्ण चित्र को देखते हैं तो हम यह पाते हैं कि हमारे समय की अनेक समस्याओं में से संभवत: चौबीस समस्याएं केंद्रीय और मुख्य समस्याएं हैं। **ये समस्याएं हैं: (1) आयुध स्पर्धा, नि:शस्त्रीकरण तथा हिंसक शक्ति के प्रयोग की धमकियां, (2) विकास, (3) विश्व की आर्थिक व्यवस्था की पुनर्रचना, (4) ग़रीबी का उन्मूलन, (5) पर्यावरणात्मक प्रदूषण का निवारण, (6) अति-जनसंख्या या जनसंख्या की द्रुत वृद्धि, (7) रंगभेद, जातिवाद तथा नस्लवाद, (8) नशीले पदार्थों की लत या अल्कोहल तथा तम्बाकू का उपयोग, (9) भ्रष्टाचार, (10) अपराध, (11) साम्राज्यवादी, उपनिवेशवादी, नव-उपनिवेशवादी तथा एकाधिकारवादी प्रवृत्तियां, (12) धार्मिक असहिष्णुता तथा अतिवाद, (13) प्रचार माध्यमों का दुरुपयोग, (14) महिलाओं के प्रति भेदभाव, (15) तनाव तथा तनाव से सम्बद्ध रोग, (16) युवाओं में आध्यात्मिक तथा नैतिक शिक्षा का अभाव, (17) ऊर्जा का अत्यधिक उपयोग, (18) विज्ञान और प्रौद्योगिकी का गलत उपयोग, (19) मानव अधिकारों का उल्लंघन, (20) सामाजिक विघटन तथा परिवारों का टूटना, (21) नगरों का अति-विकास, (22) इतिहास का पूर्वाग्रह-युक्त तथा विकृत लेखन, (23) मुद्रा स्फ़ीति (24) नैतिक तथा आध्यात्मिक निरक्षरता तथा विचारधारा का अभाव। आध्यात्मिक व्यूह रचना: निष्कर्ष, -सम्पादक**

(1.) आयुध स्पर्धा, नि:शस्त्रीकरण तथा शक्ति के प्रयोग की धमकियां:—

यह देखकर हमारा गहरा विचार चलता है कि हिंसक शक्ति का प्रयोग करने या शक्ति के प्रयोग की धमकी (Threats to use force) देने की घटनाएं तथा सैन्य हस्तक्षेप करने की घटनाएं बढ़ती जा रही हैं और संयुक्त राष्ट्र संघ (U.N.) के सिद्धांतों के उल्लंघन की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है और संयुक्त राष्ट्र के निर्णयों की अनदेखी या उनकी उपेक्षा करने के प्रयास भी होते हैं।

शीतयुद्ध का स्पष्टत: पुनरुज्जीवन हो रहा है तथा विश्व के अनेक भागों में प्रभाव तथा प्रभुत्व और शोषण के क्षेत्रों के लिए प्रतियोगिता तथा प्रतिस्पर्धा देखी जा रही है। विशेषत: परमाणु हथियारों तथा जन-संहार के अन्य हथियारों के निर्माण की स्पर्धा नए, अधिक ख़तरनाक तथा अधिक विचारहीन स्तरों तक बढ़ गई है। हम हथियारों की इस होड़ को 'विचारहीन' इसलिए कहते हैं क्योंकि विश्व में पहले-से ही लगभग 50,000 परमाणु हथियार तो हैं ही, या लगभग 13 अरब टन टी.एन.टी. (T.N.T.) तो अब भी है ही , या पृथ्वी के प्रत्येक मनुष्य, स्त्री तथा बच्चे के लिए 3 टन बम तो हैं ही और फिर भी अधिकाधिक बम बनाए जा रहे हैं ! इन परमाणु हथियारों में विश्व के लोगों को नष्ट कर देने की पचास गुनी क्षमता है ! तब इसके बावजूद भी बम बनाने के कार्य को अतिशय विचारहीन ही तो कहेंगे !

फिर, आजकल आमतौर पर उस बात की चर्चा हो रही है जिसे कि 'स्टार वार' (Star War) या **'शक्तिशाली स्थिति पाकर वार्ता करने की नीति'** (Policy to negotiate from a position of strength) कहा जाता है। आयुध उद्योग के हितधारी लोगों के सशक्त प्रवक्ताओं ने एक शस्त्रीकरण संस्कृति (Armament culture) को जन्म दिया है। इस प्रकार हमारा विश्व अधिकाधिक अशांत और असुरक्षित होता जा रहा है।

यह देखकर विश्व-भर के लोगों में निराशा की भावना फैल गई है कि संयुक्त राष्ट्र महासभा के नि:शस्त्रीकरण संबंधी

विभिन्न सत्रों में कोई सार्थ परिणाम प्राप्त नहीं हुए। निःशस्त्रीकरण का व्यापक कार्यक्रम तैयार करने तथा निःशस्त्रीकरण के लिए अन्य उपाय करने के प्रयास असफल रहे हैं, यद्यपि महाशक्तियों के प्रतिनिधियों की सैंकड़ों बैठकें हुई हैं।

प्रश्न यह है कि संयुक्त राष्ट्र तथा विश्व में अनेक अशासकीय संगठनों (Non–governmental organisation) के जरिए किए गए विभिन्न प्रकार के प्रयास कोई सार्थक परिणाम प्राप्त करने में असफल क्यों हुए हैं ?

मेरे विचार से इसके मुख्यत: चार कारण हैं :—

(1) महाशक्तिशाली देश स्पष्टत: यह नहीं देख पाये हैं कि सामरिक संतुलन (Strategic Balance), बम-निर्माण के प्रभाव से युद्ध विराम (Deterrence), सीमित परमाणु युद्ध, शक्ति संतुलन (Balance of Power) आदि पुराने सिद्धांत वर्तमान संदर्भ में राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए व्यर्थ हैं। वे इस सत्य को समझ नहीं पाई हैं कि हथियारों के निर्माण से अधिक तनाव, अधिक संघर्षों तथा अधिक असुरक्षा का निर्माण होता है।

विभिन्न हितधारियों के प्रकट तथा अप्रकट प्रभाव के कारण वे इस बात को स्पष्टत: नहीं देख सके हैं कि यदि इन सिद्धांतों को क्रियान्वित किया जाए तो पृथ्वी का और मानव जाति का एक बड़ा भाग नष्ट हो जाएगा और इसलिए वे उनकी सुरक्षा का आश्वासन तो देते नहीं बल्कि उनकी सुरक्षा के लिए बहुत खतरनाक हैं।

(2) वे इस बात को पर्याप्तत: महसूस नहीं करते कि आयुध-स्पर्धा (Arms race) के लिए किए जाने वाले विशाल व्यय के कारण कमज़ोर राष्ट्र या समाज के कमज़ोर वर्ग अपने विकास के लिए आवश्यक आर्थिक और प्रौद्योगिकीय सहायता से वंचित हो जाते हैं। आज शक्तिशाली देश यह समझते हैं कि अस्तित्व के लिए किए जाने वाले कठोर संघर्ष का सामना करने के लिए गरीब लोगों की सहायता करने के बजाय अपनी, अपने दल की या अपने देश की विशिष्ट प्रतिभा को प्रत्यक्ष करना अधिक महत्त्वपूर्ण है। उचित भोजन तथा स्वास्थ्य परिचर्या न पाने वाले लाखों लोगों को सहायता देने की आवश्यकता के प्रति जागरूक होने के बजाय वे अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा के प्रति और अपनी विनाशकारी शक्ति बढ़ाने के प्रति अधिक सजग हैं।

(3) वे स्पष्टत: इस बात को नहीं समझ पाते हैं कि मित्रता और सहयोग की भावना तथा अन्य देशों के मामले में हस्तक्षेप तथा दखलंदाज़ी न करने की नीति और किसी भी शक्ति या किन्हीं भी सैन्य संगठनों से गठबंधन न करने की नीति सुरक्षा का सर्वोत्तम आश्वासन देती है।

(4) वे इस बात को नहीं देख सकते कि वर्तमान विश्व में परस्पर समायोजन, शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व तथा परस्पर सहयोग की नीति का कोई विकल्प (alternative) नहीं है भले ही विभिन्न देशों की संस्कृतियां, आर्थिक प्रणालियां भिन्न हों या विभिन्न देशों के क्षेत्रों के आकार तथा उनकी भौगोलिक अवस्थिति में तथा उनके वैज्ञानिक तथा आर्थिक विकास की स्थिति में भिन्नता हो।

यदि हम ऊपर बताए गए कारकों को क्रमश: विश्लेषण करते हैं तो हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि विश्व में शांति लाने के लिए निम्नलिखित बातें जरूरी हैं :—

(1) यह आवश्यक है कि राष्ट्र तथा राष्ट्रों के नेता शांति तथा अहिंसा के लिएं दृढ़तापूर्वक प्रतिबद्ध हों तथा समस्याओं को हल करने के लिए हिंसक शक्ति का प्रयोग करना या हिंसक शक्ति का प्रयोग करने की धमकी देना छोड़ दें। यह आवश्यक है कि वे **सहिष्णुता** की भावना का विकास करें तथा तनावों से मुक्ति पाएं।

(2) कमज़ोर वर्गों के विकास के लिए **सहानुभूति** तथा **अनुकम्पा की भावना** को सुदृढ़ करना होगा तथा मानव जाति के व्यापक कल्याण के लिए स्वार्थपरता, दलगत हितों या राष्ट्रीय हितों को समयोजित करना होगा या उनकी कुछ बलि देनी होगी।

(3) सभी लोगों के प्रति **मित्रता तथा सद्भाव की भावना** को तथा अन्य लोगों के मामलों में **हस्तक्षेप न करने तथा सहयोग देने की प्रवृत्ति** का संवर्धन करना होगा।

(4) **सह-अस्तित्व की भावना** का निर्माण करना होगा तथा इसके लिए दूसरे देशों पर प्रभुता पाने या कमजोर राष्ट्रों का शोषण करने की प्रवृत्ति को त्यागना होगा।

संक्षेप में यह स्पष्ट है कि जब तक विश्व-भर में सहिष्णुता, अहिंसा, सहानुभूति, अनुकम्पा या अन्य लोगों के **कल्याण की भावना** का सम्वर्धन न किया जाए और जब तक **तनाव दूर** न हो तथा प्रभुत्व पाने की भावना या शक्ति का प्रयोग करने की धमकी देने की प्रवृत्ति का निवारण नहीं होगा तब तक सच्चे अर्थों में निःशस्त्रीकरण करने, वैमनस्य को शिथिल करने तथा गठबंधनों से दूर रहने के सभी प्रयास असफल रहेंगे। राजनय, वार्ताओं या चिंतन के ज़रिए इन समस्याओं को हल करने के प्रयास केवल तभी सार्थक सिद्ध होंगे जब आर्थिक प्रणालियों में भिन्नता होने के कारण उत्पन्न **'शंका'**, **'भय'**, **'तनाव'** तथा **'असहिष्णुता'** को समाप्त न किया जाए तथा 'भाईचारे की भावना' का विकास न हो और सहिष्णुता, अहिंसा आदि आध्यात्मिक गुण ही तो हैं ? इनका विकास आध्यात्मिक शिक्षा

द्वारा ही हो सकता है न कि राजनीति या अर्थनीति द्वारा, इन मूल्यों का संवर्धन तथा नकारात्मक मूल्यों का निरसन राजनैतिक या राजनयिक कार्य के बजाय आध्यात्मिक कार्य है।

इस संदर्भ में यह बात समझ ली जानी चाहिए कि शक्तिशाली देशों के संगठनों के साथ गठबंधन न करने की नीति तथा शक्ति के प्रयोग के त्याग की नीति उनके आद्य रूप 'अनासक्ति' तथा 'अहिंसा' नामक आध्यात्मिक गुणों के राजनैतिक रूप हैं। 'अनुकम्पा' या 'सहानुभूति' के गुण तथा मानव जाति के कल्याण के लिए 'सहयोग' तथा स्वार्थ-त्याग की भावना अध्यात्मिक गुण ही तो हैं। ये केवल तभी आते हैं जब हम सम्पूर्ण विश्व को एक ऐसा मानव परिवार समझते हैं जहां सभी मानव भाईचारे के एक ऐसे सूत्र में बंधे होते हैं जो कि इस विश्वास पर आधारित होते हैं कि सभी आत्माएं ईश्वर की संतान हैं।

यदि घृणा, शंका और भय बना रहता है तो न केवल हथियारों को सीमित करने या निःशस्त्रीकरण करने के प्रयास असफल हो जाएंगे बल्कि उनसे शस्त्रों का निर्माण और भी अधिक होगा।

आइए, एक क्षण के लिए यह मान लें कि सभी परमाणु हथियारों के तथा अन्य हथियारों के विनाश के लिए कोई समझौता या करार किया जाता है और आइए यह भी मान लें कि इस करार को पूर्णतः क्रियान्वित किया जाता है और सभी हथियारों को सचमुच नष्ट भी कर दिया जाता है। फिर भी इन हथियारों को बनाने का ज्ञान तो रहेगा ही! अब यदि घृणा, शंका, भय तथा प्रतिशोध की भावना को नष्ट नहीं किया जाता तो ये हथियार फिर से बनाए जा सकते हैं। इसलिए, इन नकारात्मक व्यक्तित्व-लक्षणों को नष्ट करना ही वास्तविक हल है।

इसलिए हम सामान्यतः समृद्ध राष्ट्रों तथा विशेषतः उनके नेताओं की अंतरचेतना से अनुरोध करते हैं कि वे अपनी **शुभ-इच्छा शक्ति** से काम लें तथा अपने **'अनुकम्पा'** तथा **'भाईचारे'** के गुणों को प्रदर्शित करें तथा आर्थिक तथा राजनैतिक प्रणालियों या भौगोलिक अवस्थितियों की भिन्नता पर आधारित **'घृणा'** तथा **'भय'** को त्याग दें तथा चिंतन और सद्भाव के व्यवहार के ज़रिए तनाव को दूर करें। अब हम एक अन्य समस्या पर विचार करते हैं जो कि इससे जुड़ी हुई है।

(2.) विकास

सीमित संसाधनों के विकास के विश्व में नए तथा अधिक विनाशकारी हथियारों के विकास तथा निर्माण पर जो विशाल व्यय हो रहा है, उससे विशाल मानवीय, सामग्रीगत तथा प्रौद्योगिकीय संसाधनों की खपत हो रही है। इस व्यय का आर्थिक तथा सामाजिक परिणाम यह है कि विश्व की जनसंख्या का दो-तिहाई भाग गरीबी, वंचना तथा भुखमरी के दौर से गुज़र रही है।

ऐसे समय, जबकि 5,00,000,000 लोग बेरोज़गार हैं, लगभग 4,50,000,000 लोग भुखमरी या कुपोषण (Malnutrition) से पीड़ित हैं और लगभग 2,50,000,000 लोगों को पीने के लिए सुरक्षित जल नहीं मिलता और जब 2,50,000,000 लोग नगरीय गंदी बस्तियों (Slums) में कष्टमय जीवन बिताते हैं, राष्ट्रीय सुरक्षा के नाम पर जन-विनाश (वस्तुतः अति विनाश) के हथियारों के निर्माण पर खर्च करना कितना निर्मम, कितना अमानवीय कृत्य है!

स्पष्ट है कि अधिक जटिल तथा अधिक घातक हथियार निर्मित करने के लिए इतनी विशाल धनराशि तथा इतनी अधिक संसाधनगत सामग्री (Resource material) को खर्च करने से हथियारों की होड़ बढ़ती है और वह प्रयोजन ही विफल हो जाता है जिसके लिए वह अभिप्रेत था, अर्थात इससे सुरक्षा की बजाय खतरा बढ़ता है। इस प्रकार का व्यय गलत प्राथमिकताएं (priorities) निश्चित करने तथा विनाशकारी और नकारात्मक लक्ष्य के चयन के कारण होता है। यह दुर्लभ सामग्रियों तथा जनशक्ति की महज़ बर्बादी ही है।

सैन्य अनुसंधान, नए हथियारों के विकास तथा गोला-बारूद के विनिर्माण पर होने वाला कुल वार्षिक व्यय 1000 बिलियन यू.एस. डॉलर, या प्रति मिनट 20 लाख डॉलर से भी अधिक आंका गया है। 1986–87 के दौरान हुआ व्यय तो और भी बहुत अधिक आंका गया है।

यदि इन धनराशियों के एक छोटे-से हिस्से का उपयोग हमारे विश्व की कुछ मुख्य आर्थिक तथा सामाजिक समस्याओं (जैसे—गरीबी, कुपोषण, शिशु-मृत्यु आदि) को हल करने के लिए या ग्रामों के लाखों लोगों के लिए सुरक्षित पेय-जल के साधन प्रदान करने के लिए किया जाता तथा अविकसित देशों में कुछ छोटे उद्योग स्थापित करने के लिए किया जाता तो इससे ग़रीब राष्ट्रों को या समाज के आर्थिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों को बहुत सहायता मिलती।

इसलिए मानवीय तथा सामग्रीगत संसाधनों की कमी के कारण या विज्ञान अथवा प्रौद्योगिकी की कमी के कारण नहीं बल्कि कुछ राष्टों की गलत पूर्वताओं के कारण विकास तथा प्रगति में रूकावट आ रही है। ये गलत पूर्वताएं गलत लक्ष्यों पर इस मामले में शक्तिशाली हथियार तैयार करने के लक्ष्य पर आधारित हैं। **अन्य राष्ट्रों के प्रति नकारात्मक प्रवृत्तियों द्वारा**

ये लक्ष्य निश्चित होते हैं। ये प्रवृत्तियां संदेह, अविश्वास, घृणा, प्रतिशोध की भावना, प्रतिकार की भावना आदि जैसे नकारात्मक मूल्यों से उत्पन्न होती हैं। निश्चय ही विकास के मार्ग में मानसिक बाधाओं तथा नकारात्मक मूल्यों (जिनसे उन बाधाओं का निर्माण होता है) को छोड़ कोई अन्य बाधाएं नहीं हैं। स्पष्ट है कि कार्य उन बाधाओं को दूर करने तथा सकारात्मक मूल्यों का संवर्धन करने का है। इस प्रकार वंचित तथा अल्प सुविधा प्राप्त वर्गों की प्रगति तथा विकास के लिए अपेक्षित सबसे पहला उपाय सारतः राजनैतिक या आर्थिक नहीं है बल्कि नैतिक तथा आध्यात्मिक है। यदि सहयोग, सहायता तथा अनुकम्पा की मानसिक प्रवृत्ति निर्मित करने के प्रारम्भिक उपाय सफल हो जाते हैं तो आर्थिक, सामाजिक और राजनैतिक उपाय स्वाभाविक रूप में उनके बाद आएंगे। विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के हमारे विशाल ज्ञान का उपयोग विनाश करने के लिये किया जा रहा है, अब हमें आध्यात्मिक प्रज्ञान का विकास करना होगा, जो कि लोगों को बचाने के लिये न कि उन्हें मारने के लिए हमारी इन उग्र प्रवृत्तियों का स्थान ले सके। इसके लिए आज एक आध्यात्मिक रूपांतरण की आवश्यकता है। परिवर्तन (आत्म-परिवर्तन) न कि प्रतिशोध हमारा ध्येय होना चाहिए।

विकास का एक अन्य आयाम भी है। वर्तमान समय में वह द्रुत औद्योगिकीकरण, प्रौद्योगिकी के अनियंत्रित प्रयोग, नगरों के क्षैतिज (horizental) तथा उर्ध्व (Vertical) विस्तार का रूप ले रहा है, जिसके कारण अपराध में भारी वृद्धि हो रही है तथा डीज़ल और पेट्रोल-चालित वाहनों आदि के उपयोग में तेज़ी से वृद्धि हो रही है और इस प्रकार वातावरण विषाक्त होता जा रहा है। आज **'विकास'** का अर्थ है 'उत्पादन तथा उपभोग की दर में वृद्धि' तथा आयातों और निर्यातों पर या एक या किसी-दूसरे उद्योग पर निर्भरता की वृद्धि।

इस प्रकार के विकास से विरल सामग्रियों के संसाधन तेजी से समाप्त हो रहे हैं। ऊर्जा का अति उपभोग हो रहा है और एण्ट्रापी में वृद्धि हो रही है। इसलिए प्रगति तथा विकास को पुनः परिभाषित करने और इस प्रकार के विकास से उत्पन्न होने वाली समस्याओं पर विचार करने की आवश्यकता है।

एक सीमा तक इस प्रकार के विकास को सराहा जा सकता है, अनुमोदित किया जा सकता है अथवा सहन किया जा सकता है, किन्तु उसके परे जब वह गला काटने वाली प्रतिस्पर्धा में बदल जाता है, गर्दन-तोड़ गति धारण कर लेता है, पर्यावरणात्मक प्रदूषण और उपभोक्तावाद को जन्म देता है और कच्चे माल का, विशेषतः विरल संसाधनों(scarce material) का तेज़ी से उपभोग होने लगता है और आयातों (imports) पर निर्भरता बढ़ जाती है और जीवन कृत्रिम अथवा मशीन-जैसा बन जाता है तो वह वरदान के बजाय अभिशाप बन जाता है। फिर राजनीति, अर्थव्यवस्था, सामाजिक गति की तथा राष्ट्र की मानसिकता पर जो प्रभाव पड़ते हैं वे भी विनाशकारी होते हैं।

ऐसा प्रतीत होता है कि वर्तमान सभ्यता विकास की ऐसी ही अवस्था की ओर बढ़ रही है। उसका दृष्टिकोण तथा लक्ष्य अति भौतिकवादी है। इस प्रकार के एकांगी विकास के जो पार्श्व प्रभाव जीवन और जीवन-शैली पर पड़ते हैं वे 'विकसित' देशों के लोगों के जीवन में दिखाई दे रहे हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि लोगों ने पारम्परिक मूल्यों (traditional values) को खो दिया है तथा उनके स्थान पर नए, अच्छे मूल्यों को भी प्रतिस्थापित नहीं किया है, परिवार-प्रथा टूट रही है, व्यापारिक कम्पनियां तथा राष्ट्रों के बीच विवेकहीन प्रतिस्पर्धा भी चल रही है और जीवन की गति बहुत बढ़ गई है तथा तनाव और तनाव से सम्बंधित रोगों में ख़तरनाक वृद्धि भी हुई है।

इस प्रकार की वृद्धि और विकास पर अंकुश लगाने के लिए आध्यात्मिक तथा नैतिक विकास भी आवश्यक है। केवल आध्यात्मिक तथा नैतिक विकास ही औद्योगिक वृद्धि तथा भौतिक विकास को उचित दिशा दे सकता है तथा उसकी उचित सीमा निश्चित कर सकता है। अन्यथा, दिशा-विहीन विकास विवेकहीन उपभोक्तावाद तथा भौतिकवाद को जन्म देगा तथा मूल्यों की हानि होगी और अंततः पर्यावरण, सभ्यता तथा मानव जाति का बड़ा भाग नष्ट हो जाएगा। विकास की समस्या का सम्बंध अर्थ-व्यवस्था से भी है। अतः अब उस पर विचार कर लेना चाहिए।

(3.) अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की पुनर्रचना

इस दशक के आरम्भ में कुछ विकसित या औद्योगीकृत देशों में जो विश्वव्यापी आर्थिक संकट उत्पन्न हुआ था वह सचमुच विश्वव्यापी स्वरूप का हो गया है। जहाँ उसने उन विकसित देशों में मंदी या आर्थिक गतिरोध (Economic stagnation) तथा बेरोज़गारी को जन्म दिया वहीं विकासशील तथा अल्प विकसित देश भी उससे प्रभावित हुए। विकसित देशों ने जो संरक्षणवादी उपाय अपनाए, उनसे भुगतान-घाटों का शेष बहुत बढ़ गया, कर्ज़ का बोझ बढ़ गया और अल्प-विकसित देशों को विकसित देशों से जो औद्योगीकृत उत्पाद आयात करने पड़ते हैं उन उत्पादों की कीमत बहुत बढ़ जाने के कारण व्यापार के निबंधन बदतर हो गए। इस संकट के परिणाम स्वरूप अनेक विकासशील देशों की दशा आज भी दयनीय है क्योंकि वे अपने

कर्जों का भुगतान नहीं कर पा रहे हैं। कुछ देश तो बहुत खतरनाक ढंग से प्रभावित हैं और कुछ अन्य देश तो आर्थिक विनाश के कगार पर हैं।

आर्थिक संकट ने स्पष्टतः वर्तमान विश्व-प्रणालियों के संरचनात्मक असंतुलन तथा असमानताओं को उजागर किया है। उसने यह दर्शाया है कि विकासशील देशों की अर्थ-व्यवस्थाएं किस प्रकार प्रभाव्य हैं, किस प्रकार आर्थिक शक्ति की कुंजियाँ चंद विकसित देशों के हाथों में हैं और इनका उपयोग विकासशील देशों की हानि के लिए कैसे किया जाता है या कैसे किया जा सकता है और किस प्रकार वर्तमान प्रणाली में विनिमय दरों में व्यापक और अपूर्वकथनीय घट-बढ़ होती है और वस्तुओं के मूल्य कितने बढ़ते रहते हैं तथा वे प्रायवेट बैंकिंग पर कितना अधिक निर्भर हैं। विकसित तथा विकासशील देशों के बीच जो बड़ी खाई है उससे बहुत अस्थिरता पैदा हुई है तथा अनेक राष्ट्रों की शांति, प्रभुसत्ता तथा सुरक्षा के लिए खतरा पैदा हो गया है।

वर्तमान आर्थिक संकट को दृष्टिगत रखते हुए हम निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुंचते हैं :—

1.अंतर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था की पुनर्रचना करना अत्यंत आवश्यक है। इसके लिए राष्ट्रों के बीच के आर्थिक सम्बंध **सहयोग** तथा **पारस्परिक सहायता** पर आधारित होने चाहिए।

2. कच्चे माल, जनशक्ति, विज्ञान तथा प्राद्योगिकी में **दूसरों को उनका हिस्सा देने की भावना** होनी चाहिए जैसे कि किसी संयुक्त परिवार के सदस्य लाभों और उत्तरदायित्वों में हिस्सा बंटाते हैं। राष्ट्रों को यह समझना चाहिए कि पृथ्वी सबकी है और हम **सब लोग एक परिवार के सदस्य हैं,** हम सबमें **सच्चे भाईचारे की भावना** होनी चाहिए। **हम सभी को एक नए विश्व की स्थापना के लिए कार्य करना चाहिए जिसमें एक विश्व प्रभुसत्ता हो, सभी लोगों की आकांक्षाओं की पूर्ति हो तथा सभी लोग समृद्ध हों जबकि आज के विश्व में धन कुछ ही लोगों के हाथ में है और अधिकांश लोग धन से वंचित हैं।**

3. देशों को स्वयं के संसाधनों तथा कौशलों पर अधिकाधिक निर्भर रहना चाहिए तथा उन्हें अपनी विकास आयोजनाओं को अपनी सामाजिक-आर्थिक वास्तविकताओं तथा प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित करना चाहिए।

पुनःश्च, 'भाईचारे की भावना', दूसरों के साथ 'सहभागी होने की भावना' और 'आत्म-निर्भरता' के गुण वे गुण हैं जो कि आध्यात्मिक संस्कृति द्वारा संवर्धित तथा विकसित किए जा सकते हैं।

4. **भाईचारे की संकल्पना किसी सामाजिक या प्राकृतिक विज्ञान द्वारा दी गई संकल्पना नहीं है। यह संकल्पना आध्यात्मिक प्रज्ञान द्वारा दी गई है। पृथ्वी के फलों में दूसरों को हिस्सेदार बनाने की भावना विज्ञान के किसी भी नियम पर आधारित नहीं है, वह एक नीतिशास्त्रीय सिद्धांत है। इसलिए, उपचार मुख्यतः आध्यात्मिक है।**

अब थोड़ा ग़रीबी की विश्व-व्यापी समस्या पर, जो कि पूर्व-चर्चित तीनों समस्याओं से सम्बद्ध है, पर विचार करते हैं—

(4.) गरीबी का उन्मूलन

यह अंदाज़ा लगाया गया है कि विश्व की जनसंख्या का दो-तिहाई भाग गरीबी की दशा में है। विश्व बैंक के अनुसार, विकासशील देशों की 40 प्रशित से भी अधिक जनता नितांत गरीबी की दशा में रहती है ! यह भी अंदाज़ा है कि वर्ष 2000 तक 500 करोड़ लोग, अर्थात् 1981 में विश्व की जितनी जनसंख्या थी उससे भी अधिक लोग, या वर्ष 2000 में विश्व की जनसंख्या के लगभग 78 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा के नीचे होंगे।

हमें यह बात समझनी चाहिए कि गरीबी हमारे जीवन को कई प्रकार से प्रभावित करती है। उसका अर्थ है चिकित्सा परिचर्या का पूर्ण अभाव, बूढ़ों या बच्चों का कुपोषण, अनारोग्यकर जीवन स्थितियों के कारण पैदा होने वाले रोग, नैतिकता का पतन, पारस्परिक सम्बंधों में तनाव, अपराधों में वृद्धि और उचित भोजन तथा चिकित्सा के अभाव में अनेक लोगों की मृत्यु।

क्या यह खेद का विषय नहीं है कि जब सभी आयु-वर्गों के लाखों लोग ग़रीबी के कारण भीषण कष्ट पा रहे हैं, तब अरबों अमरीकी डॉलर व्यर्थ और विनाशकारी उपक्रमों पर ख़र्च किए जा रहे हैं ! यदि इन संसाधनों का उपयोग ग़रीबी की गम्भीर तथा भयानक समस्या को हल करने के लिए किया जाए तो विश्व में जीवन बहुत अच्छा हो जाएगा।

आइए, हम कम-से-कम यह समझें कि विश्व की वर्तमान परिस्थिति में शांति तथा समृद्धि अविभाज्य है और उनका स्वरूप विश्व-व्यापी है। कोई भी समृद्ध राष्ट्र तब तक शांतिपूर्वक नहीं रह सकता जब तक कि उसका पड़ोसी राष्ट्र कुपोषण तथा रोग की अपनी समस्या से जूझ रहा हो। इसलिए, आइए, हम उन विशाल धनराशियों को, जिनका उपयोग सैन्य अनुसंधान तथा सैन्य शक्ति निर्माण पर किया जा रहा है, हमारे लाखों गरीब भाइयों की दशा सुधारने पर खर्च करें।

आइए, हम ऐसी जागरूकता पैदा करें कि खाद्य पदार्थ, खाद्य सामग्रियों तथा जल की बर्बादी लाखों लोगों के प्रति

—शेष पृष्ठ ११ पर—

पर्यावरण प्रदूषण, जनसंख्या की द्रुत वृद्धि, रंगभेद और जातिवाद तथा नशीले पदार्थों के सेवन की समस्याएं और उनका आध्यात्मिक हल

पिछले पृष्ठों में चार मुख्य समस्याओं पर प्रकाश डाला गया था। इस लेख में लेखक ने दूसरी चार विश्व-व्यापी समस्याओं पर प्रकाश डाला है। अत: हम पिछले क्रमांक के आगे क्रमांक से उन समस्याओं पर लेखक द्वारा की गयी चर्चा छाप रहे हैं।
—सम्पादक

(5.) पर्यावरण का प्रदूषण

विश्व के पर्यावरण का गम्भीर ह्रास हो रहा है। मुख्यत: पांच कारक प्रदूषण के स्वरूप और मात्रा को निश्चित करते हैं। इनमें से एक कारक है जनसंख्या का आकार और वृद्धि। दूसरा कारक है उत्पादन, उपभोग तथा परिवहन की दर और उत्पादन तथा परिवहन के लिए प्रयुक्त प्राद्यौगिकी का प्रकार तथा स्तर। तीसरा कारक है परमाणु हथियारों के परीक्षण तथा परमाणु रिएक्टरों की अपशिष्ट सामग्रियों आदि का निपटारा। चौथा कारक है कीटनाशी औषधियां (Insecticides), उर्वरक (fertilizers) खाद्य संरक्षी पदार्थों (preservatives) का उपयोग तथा ऐसे ही अन्य रसायनों का उपयोग। पांचवां कारक है वृक्षों की कटाई द्वारा या ऐसे ही अन्य कार्यों द्वारा वनों का विनाश तथा पहाड़ों का वृक्षविहीनीकरण जिससे कि प्रकृति का परिस्थितिक संतुलन (Ecological balance) नष्ट हो जाता है।

यदि पारिस्थितिकीय संतुलन को परिरक्षित करने तथा पर्यावरण को अधिक प्रदूषित होने से रोकने के लिए समय रहते उपाय न किए गये तो विश्व के पर्यावरण के पूर्ण विनाश की पूरी सम्भावना है क्योंकि पर्यावरण की इन प्रभावों को सहने की क्षमता बहुत कम होती जा रही है।

यह बात याद रखी जानी चाहिए कि प्रदूषण को प्राकृतिक सीमाओं के भीतर सीमित नहीं रखा जा सकता क्योंकि पृथ्वी तथा उसका पर्यावरण एक है तथा वायु वर्षा, समुद्री धाराएं आदि बातें प्रदूषकों को पृथ्वी में दूर-दूर तक ले जाती हैं। यह बात भी याद रखी जानी चाहिए कि मनुष्य तथा अन्य जीवित प्राणियों का स्वास्थ्य तथा उनका कल्याण तथा जल और वायु के संसाधन प्रदूषण से प्रत्यक्षत: या परोक्षत: प्रभावित होते हैं। इसलिए सम्पूर्ण मानव जाति के कल्याण के उपाय करना अत्यंत आवश्यक है।

चूंकि वर्तमान स्थिति जनसंख्या में द्रुत वृद्धि होने तथा औद्योगीकृत देशों में प्रौद्योगिकी की असीमित उपयोग होने के कारण उत्पन्न हुई है इसलिए इस बात की आवश्यकता है कि लोग **आत्म-नियंत्रण** से काम लें और मानव जाति के व्यापक कल्याण का ध्यान रखें।

(6.) अति-जनसंख्या या जनसंख्या की द्रुत वृद्धि

जनसंख्या में लगातार तेज़ी से वृद्धि होने के कारण पर्यावरण तथा जीवन-स्तर के लिए खतरा पैदा हो गया है। उससे अनेक सामाजिक तथा आर्थिक समस्याएँ पैदा हो गई हैं तथा गहन हो गई हैं जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, परिचर्या, रोज़गार, आवास आदि की समस्याएं।

प्रति वर्ष लगभग 12 करोड़ 70 लाख बच्चे पैदा होते हैं। प्रति वर्ष 9 करोड़ 50 लाख बच्चे स्कूल जाने की आयु के होते हैं। प्रतिवर्ष 2 करोड़ लोग 63 वर्ष की आयु के होते हैं। इन बातों के साथ अनेक सम्बद्ध समस्याएँ सामने आती हैं।

युद्धों, महामारियों तथा प्राकृतिक आपदाओं से विश्व-जनसंख्या की वृद्धि पर उल्लेखनीय रोक नहीं लगी है। यह देखा गया है कि 1900 से, जो राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय, प्राकृतिक तथा मानव-निर्मित संकट घटित हुए हैं, जिनमें प्रथम तथा द्वितीय विश्व युद्ध भी शामिल हैं, विश्व की जनसंख्या वृद्धि में केवल लगभग 10 वर्षों का विलम्ब हुआ है। इससे प्रकट होता है कि जनसंख्या की द्रुत वृद्धि की प्रक्रिया उच्च जन्म-दर तथा निम्न मृत्यु-दर के कारण घटित हुई है और चूंकि जनसंख्या की वृद्धि तेजी से होती है इसलिए उसे दुगुनी होने में कम समय लगता है। यह अनुमान है कि वर्तमान वृद्धि-दर पर, जो कि 20 प्रतिशत है, जनसंख्या 25 वर्षों की मात्र एक पीढ़ी में दुगुनी हो जाएगी।

जनसंख्या वृद्धि के नियंत्रण के लिए अब अनेक जन्म-नियंत्रण (Birth control) प्रणालियाँ प्रचलित हैं। यह पाया

गया है कि अनेक देशों में जो विभिन्न गर्भ-निरोधक साधन (contraceptives) प्रचलित हैं उनकी अपनी जटिलताएं हैं। खाई जाने वाली गर्भ-निरोधक औषधियों (oral contraceptives) तथा प्रयोग में लाए जाने वाले गर्भ-निरोधक साधनों (आई.यू.डी.–I.U.D.) से उच्च रक्त चाप, हृदय रोग तथा ग्रीवा रोग और छाती के कैंसर—जैसे रोग होते बताए गए हैं। इसके अतिरिक्त, अनेक विकसित तथा विकासशील देशों में, जन्म-नियंत्रण साधनों का परिदान कठिन है।

स्वाभाविक, सर्वोत्तम तथा वस्तुतः पवित्र, स्वस्थ तथा अधिक आरोग्यकर प्रणाली है ''काम भावना के नियंत्रण के ज़रिए जन्म-नियंत्रण'', ''ब्रह्मचर्य के ज़रिए जन्म-नियंत्रण'' या ''कामुक विचारों के जन्म पर नियंत्रण के ज़रिए जन्म-नियंत्रण'' यह केवल आध्यात्मिक शिक्षा के ज़रिए सम्भव है।

इस समस्या के समाधान के लिये लोगों को यह शिक्षा देने की आवश्यकता है कि 'काम' वासना के विचार मनुष्य के अधश्चेतक (Hypothalamus) को उत्तेजित करते हैं और अधश्चेतक को उत्तेजित करता है जिसके फलस्वरूप मनुष्य का शरीर और मन अपनी साम्यावस्था में न रहकर 'तनाव' की स्थिति में आ जाते हैं और मनुष्य की रोग-नाशक अथवा रोग-अवरोध शक्ति को कम कर देते हैं। कामोत्तेजित व्यक्ति का अधश्चेतक उसकी पीयुष ग्रंथि (Pituitary gland) को भी उत्तेजित करता है और वह ग्रंथि अन्य ग्रंथियों को उत्तेजित करती है। ये ग्रंथियां द्रवित हो उठती हैं और इसके परिणामस्वरूप शरीर के बहुत-से अमूल्य-तत्त्व—प्रोटीन, विटामन-सी, केसीन, फास्फोरस आदि जो कि शरीर में ही विशिष्ट प्रकार से बने होते हैं, खोये जाते हैं और इससे शरीर को बहुत क्षति एवं हानि होती है तथा मनुष्य थकावट, कमज़ोरी तथा मानसिक ह्रास का अनुभव करता है।

यह शिक्षा देने की भी ज़रूरत है कि शारीरिक तौर पर कुछ क्षण सुहावने संवेदन (pleasure) अनुभव के कारण मनुष्य को काम-भोग की रोज ही लत पड़ जाती है जैसी कि मादक-द्रव्य सेवन करने वाले को पड़ जाती है।

फिर, काम विकार से जो तनाव की स्थिति पैदा होती है, उससे तनाव-जनित रोग भी हो सकते हैं और शारीरिक सम्पर्क से भी कई रोग एक से दूसरे को हो सकते हैं। एड्स (AIDS) इनमें से एक है।

लोगों को यह भी समझाने की ज़रूरत है कि काम विकार से मनुष्य के चित्त में जो विक्षेप होता है, उससे कई मानसिक विषम स्थितियां भी पैदा होती हैं जो मनुष्य के व्यवहार और आचार दोनों को नष्ट करती हैं।

अतः आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य को ऐसी आध्यात्मिक शिक्षा दी जाए जिससे उसे आत्मिक सुख अथवा आनंद की अनुभूति हो और वह दैहिक आकर्षण से उठ सके और अपनी स्वास्थ्य-प्रद और रोग-नाशक शक्तियों को सुरक्षित रख सके। ऐसी विधि तो आत्मा-निश्चय और योगाभ्यास ही के रूप में उपलब्ध है। मनुष्य को यह भी बताना ज़रूरी है कि वह कामोत्तेजक 'साहित्य' अथवा अश्लील फिल्मों इत्यादि का प्रयोग न करे। आज मनुष्य को यह बताने की ज़रूरत है कि अगर आत्मा-निश्य और सहज योगाभ्यास को न अपना कर संतानोत्पत्ति की इस गतिविधि को न रोका गया प्रकृति ही किसी अत्यंत विक्राल प्रकोप द्वारा पृथ्वी के भार को हल्का करने तथा प्रारम्भिक स्थिति में लाने का कार्य करेगी। □

(7.) रंगभेद, नस्लवाद तथा जातिवाद

नस्ल, रंग, प्रजातीय (ethnic) या राष्ट्रीय (national) भेद, वंश या कुल, व्यवसाय या जीविका आदि पर आधारित भेदभाव एक नस्ल, एक रंग, एक वंश, एक जाति या एक प्रजातीय समूह की दूसरी नस्ल, दूसरे रंग, दूसरे वंश, दूसरी जाति या दूसरे प्रजातीय समूह पर श्रेष्ठता के विश्वासों या सिद्धांतों पर आधारित हैं। भेदभाव के समर्थक लोग ऐसे विश्वास या सिद्धांत को दूसरे समूह पर अपने समूह को राजनैतिक, आर्थिक या सामाजिक लाभ दिलाने के लिए न्यायोचित ठहराते हैं। इस प्रकार के विश्वास का उपयोग किसी विशिष्ठ रंग, प्रजातीय मूल या उद्भव, जाति या जीविका वाले किसी अन्य समूह पर श्रेष्ठता पाने या उसका शोषण करने के लिए किया गया है।

रंगभेद लोगों के एक समूह या वर्ग के प्रति निरादर या घृणा की प्रवृत्ति पर आधारित है। वह अपनी नस्ल तथा अपने रंग के प्रति मिथ्याभिमान पर आधारित है। वह स्वार्थपरता तथा शोषण और प्रभुत्व की अभिप्रेरणाओं से उत्पन्न होता है। वह दूसरे लोगों के प्रति अन्याय करता है तथा दूसरे लोगों के हितों की हानि करता है। वह दूसरे लोगों को उनके अधिकारों से वंचित करने के व्यवहार पर आधारित है। वह एक बर्बरतापूर्ण तथा अमानवीय कार्य है जबकि इस प्रकार की हिंसा का समर्थन करने वाले लोग यह समझते हैं कि वे अधिक विकसित हैं। नकारात्मक मूल्यों के ऐसे संयोजन का प्रतिकार आध्यात्मिक गुणों के विस्फोट तथा गर्जन के ज़रिए ही किया जा सकता है।

मनुष्य की चेतना को जागृत करना होगा ताकि वह अपने बर्बरता पूर्ण कृत्यों को त्याग दे। उसकी आत्मा का उपचार आवश्यक है।

ऐतिहासिक दृष्टि से नस्ली भेदभाव की जड़ें उपनिवेशवाद (Imperialism) में हैं, क्योंकि वह तब आरम्भ हुआ जब यूरोपीय राष्ट्रों ने सस्ते कच्चे माल के स्रोत निर्मित करने के लिए, उनके द्वारा विनिर्मित माल के लिए बाज़ार पाने के लिए, गुलामों या स्थानीय लोगों के रूप में सस्ते श्रमिक पाने के लिए एक आर्थिक उपक्रम के रूप में अफ्रीका में उपनिवेश स्थापित किए। भारत में, लोगों के कतिपय समूहों ने कतिपय अस्वच्छ कार्य करने वाले या कतिपय अन्य समूहों को निम्न जाति का मान लिया।

आफ्रीका के, विशेषत: दक्षिण आफ्रीका के लोगों पर नस्लवाद के कारण बहुत समय तक अनेक प्रकार के अत्याचार किए गए हैं तथा उत्पीड़न की अनेक बर्बर कार्रवाइयाँ की गई हैं। भारत में कुछ जातियों द्वारा अन्य जातियों के साथ बहुत भेदभाव-पूर्ण व्यवहार किया गया है और उन्हें पीड़ा पहुँचाई गई है

नस्ली-भेदभाव (Racism) की समस्या को हल करने के लिए संयुक्त राष्ट्र तथा अशासकीय संगठनों द्वारा बहुत-कुछ किया गया है, किंतु दक्षिण अफ्रिका की नस्लवादी सरकार के कठोर रवैये के कारण यह समस्या आज भी बनी हुई है। भारत में भी राष्ट्रीय नेताओं तथा सुधारकों ने जातिगत भेदभाव (Casteism) के उन्मूलन के लिए बहुत प्रयास किए हैं, किन्तु बहुत-कुछ करना बाकी है।

वस्तुत: लोगों के मन में यह भावना पैदा करनी होगी कि वे सभी आत्माएँ हैं और उनके रंग, उनकी नस्ल, उनके प्रजातीय भेद या वंश के कारण उन्हें यह अधिकार नहीं मिलता कि उन्हें श्रेष्ठ व्यक्ति या श्रेष्ठ समूह माना जाए, बल्कि मानसिक, नैतिक, आध्यात्मिक तथा सामाजिक गुणों से ही कोई व्यक्ति या समूह श्रेष्ठ बनता है। जिस व्यक्ति में नम्रता, सेवा-भावना, सहयोग तथा भाईचारे की भावना, संतोष, सहिष्णुता आदि हो वह व्यक्ति उच्चतर श्रेणी का है। इस प्रकार आध्यात्मिक तथा मानवीय गुण किसी व्यक्ति को उच्चतर आत्मा कहलाने का अधिकार देते हैं, न कि किसी व्यक्ति का रंग या उद्भव। यही भावना सभी प्रकार के भेदभाव का उन्मूलन कर सकती है।

आध्यात्मिक शिक्षा के फलस्वरूप ही प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय के छात्र, जो कि विभिन्न प्रजातीय समूहों, नस्लों, देशों तथा सामाजिक और आर्थिक स्तरों के होते हैं, एक परिवार के सदस्यों के रूप में एक-साथ कार्य करते हैं और उनमें जाति, रंग, नस्ल आदि पर आधारित कोई भी भेदभाव नहीं होता।

(8.) नशीले पदार्थों की लत, अल्कोहल तथा तम्बाकू का उपयोग

बार्बिट्युरेट तथा बार्बिट्युरिक एसिड के व्युत्पन्न पदार्थों का शामक (sedatives), प्रशांतक (tromquilisers) या सम्मोहकों (hypnotics) आदि के रूप में औषधीय उपयोग है या चिकित्सीय पर्यवेक्षण (medical supervision) के अंतर्गत उसकी बड़ी मात्राओं का उपयोग निश्चेतक (Anaesthesia) के रूप में किया जाता है।

धीरे-धीरे मनुष्य इन पदार्थों को अधिकाधिक मात्रा में लेने लगता है और इससे न केवल गम्भीर व्यवहारात्मक दोष आ जाते हैं बल्कि उनका उपयोग अल्कोहल (शराब) के उपयोग से भी कहीं अधिक बुरा है। इससे व्यक्ति में सामाजिक, भावात्मक तथा व्यक्तिगत गिरावट आ जाती है तथा वह मानसिक संभ्रान्ति (mental confusion), विभ्रम (Hallucination) तथा प्रलाप (Delirium) का शिकार हो जाता है और उसकी मन:स्तापीय (psychotic) तथा व्यामोहाभीय (Paramoid) प्रतिक्रियाएं होती हैं। हेरोइन, (Heroin) जो कि अकेले ही या बार्बिट्युरेट (Barbitarates) के साथ ली जाती है या अल्कोहल अथवा अन्य उत्तेजक पदार्थों के साथ ली जाने वाली बार्बिट्युरेट सर्वाधिक खतरनाक नशीले पदार्थ हैं।

जो युवक आने वाली परीक्षाओं के कारण या रोज़गार की समस्या के कारण या अपने परिवार में समायोजन (adjustment) न कर पाने के कारण परेशानी तथा तनाव से ग्रस्त रहते हैं, वे, या जो युवा कौतूहलवश अथवा अपने मित्रों या नशीले पदार्थों के एजेंटों के सुझाव पर नशीले पदार्थों का प्रभाव आजमाने की कोशिश करते हैं, वे इनके प्रयोग की लत के शिकार हो जाते हैं, क्योंकि जब ये नशीले पदार्थ लिए जाते हैं तो उनसे सुखद सम्वेदनाएँ होती हैं तथा तनाव दूर होता है। ये नशीले पदार्थ अस्थायी सुख-तरंग भी देते हैं और उनसे मस्ती भी आ जाती है। इसलिए मनुष्य में इन नशीले पदार्थों की ललक पैदा हो जाती है और वह उन पर बुरी तरह से निर्भर हो जाता है। यदि उस अवस्था में मनुष्य उन्हें अचानक छोड़ देता है तो उसे दौरे आने लगते जो घातक भी साबित हो सकते हैं। यदि मनुष्य उन्हें नहीं छोड़ता तो वह इन नशीले पदार्थों की उच्चतर मात्राओं पर शारीरिक तथा मानसिक रूप से अधिक निर्भर हो जाता है जिससे उसके व्यक्तित्व में गिरावट आ जाती है।

जिन नशीले पदार्थों का मनुष्य शिकार हो जाता है, उनका मनुष्य के केंद्रीय तंत्रिका तंत्र पर प्रभाव पड़ता है। मनुष्य के मन तथा व्यवहार पर इन नशीले पदार्थों का प्रबल प्रभाव पड़ता है।

अल्कोहल के दुष्परिणाम सुविदित हैं। उसका सेवन करने वाले मनुष्य में न केवल उसके प्रति ललक तथा निर्भरता पैदा हो जाती है, बल्कि शीघ्र ही या आगे चलकर मनुष्य अपनी भावनाओं पर नियंत्रण खो देता है। अल्कोहल का सेवन करने वाले मनुष्य में यह प्रवृत्ति होती है कि वह दूसरों को अपने दोषों का कारण मानता है; वह दूसरों को विशेषतः अपने परिवार के सदस्यों को या साथियों को गलत समझता है। अल्कोहल से आक्रामक प्रवृत्तियां (Aggresive tendencies) उभरती हैं जो कि समाज-विरोधी तथा आपराधिक कृत्यों में अभिव्यक्त होती हैं। जो मनुष्य अल्कोहल के प्रभाव में होता है वह अधिक भावावेशपूर्वक व्यवहार करता है तथा उसकी प्रवृत्ति तथा उसके व्यवहार में जो परिवर्तन आता है उससे भावात्मक सम्बंध बिगड़ जाते हैं तथा जटिलताएं पैदा हो जाती हैं।

शराब बनाने वाली फर्में और नशीले पदार्थों के निर्माता या उनके एजेंट युवाओं तथा अशांत चित्त के लोगों का शोषण करते हैं तथा उन्हें इनका उपयोग करने के लिए फुसलाते हैं। परिणाम स्वरूप अधिकाधिक युवा नशीले पदार्थों तथा अल्कोहलयुक्त पेय पदार्थों के शिकार हो जाते हैं।

इस प्रकार मनुष्यों का चरित्र गिर जाता है, व्यवहार में गम्भीर परिवर्तन आ जाता है और उनका नैतिक पतन हो जाता है। यह युवाओं के लिये तथा समाज के लिये गम्भीर खतरा है क्योंकि इससे अपराध वृद्धि होने के अलावा अनेक सामाजिक, आर्थिक तथा पारिवारिक समस्याएं पैदा हो जातीं है।

धूम्रपान भी एक गम्भीर समस्या है। अब यह बात जान ली गई है कि तम्बाकू के या तम्बाकू के धुएँ के विभिन्न घटकों से विभिन्न रोग होते हैं। अब यह कहा जाता है कि तम्बाकू के उपयोग से फेफेड़े या मुंह का कैंसर होता है तथा हृदय-रोग भी होते हैं। यह भी पाया गया है कि भले ही कोई व्यक्ति धूम्रपान न करता हो फिर भी यदि धूम्रपान करने वाले किसी व्यक्ति के तम्बाकू के धुएँ के कुछ कण उसके ओठों या फेफड़े पर जम जाते हैं तो कभी-कभी उसे कैंसर हो सकता है।

यद्यपि नशीले पदार्थों की लत छुड़ाने के लिये या लोगों को नशीले पदार्थों, अल्कोहल या तम्बाकू के उपयोग से या उन पर निर्भरता से मुक्त कराने के लिये औषधियों का उपयोग तथा चिकित्सा-व्यवसायियों का मार्गदर्शन सहायक या आवश्यक होता है, तथापि **यह पाया गया है कि आध्यात्मिक ज्ञान, सद्गुणों की शिक्षा तथा चिंतन से मनुष्य तनाव और चिंताओं से मुक्त हो जाता है। यह शिक्षा उसे जीवन में एक भूमिका और अर्थ देती है, जीवन के आघात को सहने की क्षमता बढ़ाती है तथा उसे विश्रांति तथा शरीरिक और मानसिक ऊर्जा तथा दक्षता प्रदान करती है। इन बातों से मनुष्य को स्थायी सुख तथा आध्यात्मिक आनंद की (या आध्यात्मिक मस्ती की) हानिरहित भावना की प्राप्ति होती है और मनुष्य को अपने जीवन में विभिन्न प्रकार के संतुलन प्राप्त होते हैं।**

(पृष्ठ ७ का शेष)

अपराध है। आइए, हम कपड़ों, जूतों तथा अन्य उपभोक्ता वस्तुओं को अत्यधिक मात्रा में तथा दीर्घकाल तक जमा रखना छोड़ दें क्योंकि खाद्य तथा ये वस्तुएँ वे न्यूनतम आवश्यकताएँ हैं जो कि मनुष्य के जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक हैं। समृद्ध राष्ट्र अपने उपक्रमों के लाभ गरीब से गरीब लोगों को देने से न कतराएं क्योंकि गरीब लोग भी इसी पृथ्वी पर पैदा हुए हैं और उन्हें भी पृथ्वी के फलों को पाने का कुछ अधिकार है।

यह कहने के लिए बहुत अधिक शब्दों की आवश्यकता नहीं है कि मितव्ययिता पूर्वक तथा सोच-समझ कर खर्च करने का गुण, दूसरे लोगों का लिहाज करने का गुण, जमाखोरी न करने का गुण तथा दूसरे लोगों के सुख के लिये त्याग करने का गुण तथा कम सौभाग्यशाली लोगों के प्रति उदारता बरतने का गुण धार्मिक गुण या आध्यात्मिक सद्गुण हैं जिनका रोपण तथा संवर्धन आध्यात्मिक प्रज्ञान द्वारा होता है।

पृष्ठ १९ का शेष

परिवार के भीतर सदाचारपूर्ण पारिवारिक जीवन की संकल्पना दे

हमें ऐसे ज्ञान की आवश्यकता है जो कि हमारी चेतना को इतनी ऊंचाई तक उठा दे कि वह राष्ट्रगत, धर्मगत, जातिगत, भाषागत सीमाओं और मानव जाति को विभाजित करने वाली सभी अन्य प्रकार की सीमाओं को लांघ जाए। ऐसा ज्ञान केवल आध्यात्मिक ज्ञान ही है। आध्यात्मिक ज्ञान मनुष्य को देवता बना देता है और लोगों को एक संयुक्त मानव जाति बनाने की शिक्षा देता है। वह मनुष्य को विभिन्न भेदभावों पर आधारित चेतना के बजाए विश्वजनीन चेतना देता है। आध्यात्मिक शिक्षा का नारा है एकता और एक विश्व, न कि शक्ति गुटों वाला विश्व। आध्यात्मिक ज्ञान सभी मनुष्यों को एक पृथ्वी के नागरिक बनाता है।

भ्रष्टाचार, अपराध, साम्राज्यवादी प्रवृत्तियों तथा धार्मिक असहिष्णुता और उग्रवाद की समस्याओं का आध्यात्मिक हल

विश्व में आज जो अनेक समस्याएं हैं, जिनके कारण इस विश्व में लड़ाई-झगड़े तथा अशांति है, उनमें से भ्रष्टाचार, अपराध आदि समस्याएं भी बहुत विक्राल हैं। इस लेख में लेखक ने उन समस्याओं का विश्लेषण करते हुए उनका आध्यात्मिक हल बताया है।

—सम्पादक

(9.) भ्रष्टाचार

भ्रष्टाचार आज के समाज को घुन की तरह खा रहा है। समाज का शायद ही कोई ऐसा खण्ड होगा जो इस बीमारी से बचा होगा। वर्तमान समय में पैसे ने भगवान का स्थान ले लिया है। आज की आर्थिक कठिनाई के समय में जब कीमतें बढ़ती ही जा रही हैं तब पैसा ही मनुष्य की सबसे पहली आवश्यकता और उसकी सबसे बड़ी प्राथमिकता है। पैसा पाने के लिए आज नैतिक मूल्यों को ताक पर रख दिया जाता है। समाज के हर वर्ग में कुछ थोड़े लोग इसके अपवाद तो हैं परंतु दिनों-दिन उनकी संख्या कम होती जा रही है।

समाज में जल्दी-से-जल्दी शक्तिशाली स्थान पाने के लिए अथवा किसी छोटे-से-छोटे रास्ते के द्वारा ऊँचे-से-ऊँचे धनाढ्य पद को पाने के लिए,तेज़-से-तेज़ गति से कोई काम कराने के लिए आज व्यक्ति अवैध रीति पैसा देने में संकोच नहीं करता। वह पैसे को एक पहिये, हैंडल अथवा साधन के रूप में इस्तेमाल करता है।

भारत के बाहर के कुछ देशों के कुछ राजनीतिज्ञों के बारे में यह कहा जाता है कि उन्होंने अपार धन इकट्ठा किया है और विदेशी बैंकों में जमा कर दिया है। यह समझा जाता है कि उनकी इन करतूतों ने उनके देशों की अर्थव्यवस्था को नष्ट कर दिया है तथा उनके भ्रष्टाचरण ने उनके देशों के राजकोष पर भारी बोझ डाल दिया है।

समाज के अनेक वर्गों में भ्रष्टाचार सामान्यत: समाज की अवस्था का प्रतिबिम्ब है और वे विशेषत: विकासशील देशों में एक प्रधान समस्या है, जहाँ आवश्यक वस्तुओं का उत्पादन मांग की तुलना में कम होता है या जहाँ गरीबी है।

स्पष्ट है कि इस रोग का उपचार वह शिक्षा है जो कि लोगों के नैतिक स्तर को ऊँचा उठाती है और उन्हें ईमानदारी, निष्ठा, संतोष, राष्ट्र के प्रति कर्तव्य बोध तथा लालच और दबावों से स्वयं की रक्षा करने के गुण प्रदान करती है।

(10.) अपराध

लगभग सभी देशों में अपराध की दर निरंतर बढ़ रही है। अपराध ग्राफ़ का वक्र यह दर्शाता है कि ग्रामीण क्षेत्रों की तुलना में नगरीय क्षेत्रों में अपराध बढ़ा है। परिवार-प्रमुख तथा शिक्षक के नैतिक प्राधिकार में आई गिरावट तथा परिवार का टूटन या परिवार में संसक्ति, प्रेम तथा समायोजन के तत्वों की समग्र गिरावट आदि बातों के कारण ही मुख्यत: अपराध-दर में वृद्धि हुई है।

अपराध मुख्यत: एक सामाजिक विचलनकारी व्यवहार है। वह पुराने तथा स्थापित मूल्यों, पारम्परिक-सामाजिक मानदंडों या स्वयं ही भ्रष्ट और कानून तोड़ने वाले तथा अपनी विश्वसनीयता खो चुके तंत्र द्वारा बनाए गए तथा लागू किए गए कानूनों के विरुद्ध विद्रोहहै। हो सकता है कि अपराध की भावना तथा दण्ड पाने की इच्छा से भी उसका जन्म हुआ हो। तनाव अनेक प्रकार के अपराधों के साथ सम्बद्ध महत्वपूर्ण कारक है। धन का लोभ रिश्वत, मिलावट, कर की चोरी तथा ऐसे ही अनेक अपराधों को जन्म देता है। क्रोध तथा प्रतिशोध की प्रेरणा से भी हिंसा की अनेक घटनाएं होती हैं। सभी अपराध सुविदित छह बुराईयों—काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद तथा आलस्य— में से ही किसी-न-किसी बुराई से पैदा होते हैं।

अब अपराध समाज के लगभग सभी वर्गों तथा पहलुओं में प्रवेश कर चुका है। वह विश्व-व्यापी स्तर पर व्याप्त है। आधुनिक समाज के पास 'कानून-रहित कानून' है। कानून का जितना पालन नहीं होता उतना उल्लंघन होता है। अपराध जीवन की गुणवत्ता को नष्ट कर देता है। वह उन लोगों की स्वतंत्रता तथा अवसरों को सीमित कर देता है जो उसका पालन करना चाहते हैं।

अपराध विकास तथा राष्ट्रीय उपलब्धि को ध्वस्त कर देता है और भय तथा असुरक्षा की भावना पैदा करता है और मनुष्य यह महसूस करता है कि उसके जायज़ अधिकार एक ऐसे वातावरण में व्यर्थ हैं जहाँ कानून को लागू करने तथा अपराध की रोकथाम करने के लिए उत्तरदायी लोग भी अपराध में लिप्त हैं।

स्पष्ट है कि ऐसी शिक्षा, जो कि मनुष्य को अपने चरित्र की मजबूत नींव डालने में तथा भ्रष्टकारी प्रभावों, प्रलोभनों तथा तनावों से मुक्त रहने में सहायता पहुँचाए, अपराध के उन्मूलन में सहायक हो सकती है। कानून बनाने तथा कानूनों को शक्तिपूर्वक लागू करने के बजाय आध्यात्मिक शिक्षा तथा चिंतन अपराध के उन्मूलन के बेहतर साधन हैं।

(11.) साम्राज्यवादी, उपनिवेशवादी, नव-उपनिवेशवादी तथा एकाधिकारवादी प्रवृत्तियां

विश्व की वर्तमान अनेक समस्याएँ भूतपूर्व उपनिवेशवादी शक्तियों के कारण पैदा हुई हैं या उग्र हुई हैं।

ये उपनिवेशवादी शक्तियां आपस में गठबंधन कर लेती हैं और कतिपय अल्प-विकसित देशों में अपना वर्चस्व कायम रखने के लिये संयुक्त राष्ट्र के निर्णयों को भी ध्वस्त कर देती हैं। वे अपने बीच भाईचारा रखती हैं और विश्व को परस्पर विरोधी देशों के समूहों में विभाजित कर देती हैं। विश्व के कतिपय भागों में अपनी श्रेष्ठता बनाए रखने की भावना उनमें बहुत अधिक होती है और अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य में वे विश्व के पुलिसमैन की भाँति व्यवहार करती हैं तथा अन्य राष्ट्रों की स्वतंत्रता, प्रभुसत्ता, क्षेत्रीय सुरक्षा तथा प्रतिष्ठा की उन्हें ज़रा भी परवाह नहीं होती है।

उनकी साम्राज्यवादी तथा नव-उपनिवेशवादी प्रवृत्तियां सैन्य हस्तक्षेप के रूप में जारी रहती हैं और वे विश्व की स्थिति को गड़बड़ा देती हैं तथा अन्य राज्यों में कलह, विवाद तथा संघर्ष पैदा कर देती हैं।

वे कतिपय क्षेत्र में अपने एकाधिकारों को कायम रखने के या स्वयं को महाशक्तियों के रूप में प्रस्तुत करने के प्रयास करती हैं तथा इसके लिए वे अपनी सैन्य शक्ति का प्रदर्शन करती हैं। उप-निवेशवाद, साम्राज्यवाद तथा व्यापार, वाणिज्य, उद्योग तथा कच्चे माल के संशाधनों में एकाधिकार की ये प्रवृत्तियां भी शांति के लिये बहुत खतरनाक हैं।

शक्तिशाली बहुराष्ट्रीय फर्में (multinational firms) तो तृतीय विश्व के देशों में निषिद्ध औषधियां भी बेचती हैं। उन्हें अनेक वस्तुओं का एकाधिकार (monopoly) प्राप्त है।

ये प्रवृत्तियां अत्यधिक राष्ट्रीय अभिमान तथा राष्ट्रीय लोभ पर आधारित हैं तथा शोषण करने तथा शक्ति का प्रदर्शन करने की अभिप्रेरणाओं से सम्बद्ध हैं। लोभ, अभिमान तथा प्रभुत्व-प्रदर्शन की इन प्रवृत्तियों के उपचार के लिए यह आवश्यक है कि वे आध्यात्मिक शिक्षा लें तथा इन दुर्भावनाओं के स्थान पर सहयोग, सेवा तथा दूसरों के अधिकारों के प्रति सम्मान की भावना विकसित करें।

(12.) धार्मिक असहिष्णुता तथा उग्रवाद

धार्मिक संगठन तथा राज्य के बीच या धर्मों और शासन के बीच के संघर्ष की जड़ें विगत इतिहास में पाई जाती हैं। अनेक मामलों में, संघर्ष राज्य के सामाजिक, राजनैतिक या प्रशासनिक मामलों में धर्मों के प्रभाव की मात्रा को लेकर या प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष वैचारिक या नीतिगत आधारों पर हुए। यदि शासन ने दमनकारी उपाय अपनाए तो लोगों ने एक होकर राजनैतिक समूह बना लिए और कुछ लोगों ने तो सशस्त्र समूह भी बना लिए और शासन की नीतियों या रीतियों के प्रति उनके असंतोष, क्रोध या विरोध ने उग्र रूप धारण कर लिया। उन्होंने हिंसा के उग्र रूप को अपना लिया और विरोधियों को या अन्य राजनीतिक दल या धार्मिक समुदाय के लोगों को अविवेकपूर्ण मारना आरम्भ कर दिया। **इस प्रकार धर्म ने, जो कि अहिंसा, प्रेम, मित्रता, नम्रता तथा सेवा का उपदेश देता था, इन गुणों के बिल्कुल विपरीत गुण अपना लिए और उग्रवादी तत्वों के हिंसक कृत्यों के कारण लोगों तथा शासन के मन में धर्म के प्रति विकर्षण की भावना पैदा हो गई।**

धर्म के संकीर्ण मनस्क अनुयायी अन्य धर्मावलम्बियों के प्रति भेदभाव, घृणा तथा क्रूरता के कृत्यों में लिप्त रहते हैं। धर्मांध लोग धार्मिक उत्पीड़न, यंत्रणा तथा यहाँ तक कि साम्प्रदायिक दंगों में भी लिप्त रहते हैं। ये कृत्य धर्मों के प्रयोजन को ही विफल कर देते हैं तथा धर्मों के सार तत्व को ही नष्ट कर देते हैं, जबकि धर्म लोगों को उच्चतर नैतिकता का उपदेश देने के लिए आरम्भ हुए थे। इस प्रकार धर्म ने ही हित को हानि पहुँचाई।

हमारे ज़माने में अनेक राज्यों ने स्वयं को 'धर्म-निरपेक्ष' (secular) घोषित किया है जबकि अन्य गणराज्य किसी विशिष्ट धर्म के उपदेशों तथा सिद्धांतों पर आधारित हैं। कुछ ऐसे राज्य भी हैं जहाँ अन्य धर्मों के उपदेशों के लिए कोई भी स्थान नहीं है और वे अन्य धार्मिक समुदायों को समान स्वतंत्रता नहीं देते। वे अन्य धर्मों के लोगों के प्रति भेदभाव बरतते हैं और

(शेष पृष्ठ १६ पर)

सम्पर्क माध्यमों का दुरुपयोग, महिलाओं के प्रति भेदभाव, तनाव तथा तनाव से सम्बंधित रोग और युवक में आध्यात्मिकता के अभाव का हल

आज सम्पर्क साधन बहुत शक्तिशाली हैं। वे शांति भी फैला सकते हैं और भ्रांति तथा अशांति भी। महिलाएं भी विश्व का एक बहुत बड़ा भाग हैं। उनके साथ न्याय-युक्त व्यवहार न हो तो वह भी अशांति का एक बहुत बड़ा कारण बन जाता है। युवकों को आध्यात्मिक शिक्षा न दी जाए तो वे भी अनुशासनहीनता और तोड़-फोड़ की नीति अपनाते हैं। आज सारे विश्व में तनाव और तनाव से पैदा हुए रोग हैं। इस लेख में लेखक ने इन चारों समस्याओं और उनके आध्यात्मिक हल पर प्रकाश डाला है।

—सम्पादक

(13.) जनसम्पर्क माध्यमों का दुरुपयोग

अब जनसम्पर्क माध्यम बहुत विकसित हो गए हैं तथा शक्तिशाली भी हो गए हैं, विशेषत: वहाँ जहाँ समाचार पत्रों की स्वतंत्रता है। जनता, बुद्धिजीवी वर्ग तथा राज्य पर उनका अद्भुत प्रभाव है। इसलिए यदि नैतिक मानदण्डों का पतन होता है तो निश्चय ही जनता तथा शासन की मानसिक नैतिकता बुरी तरह से प्रभावित होगी। यदि जनसम्पर्क माध्यम ऐसे लोगों के हाथों में हो जो कि कामुकता तथा अश्लीलता में रुचि रखते हों तो वे अपने पाठकों, श्रोताओं तथा दर्शकों को वैसी ही अश्लील सामग्री देंगे।

इसलिए जनसम्पर्क माध्यम जनता की नैतिकता को बनाने या बिगाड़ने के शक्तिशाली माध्यम हो सकते हैं।

जनसम्पर्क माध्यम साम्प्रदायिक दंगे भड़का सकते हैं या आंदोलनकारियों में समझदारी, गम्भीरता तथा शांति भी पैदा कर सकते हैं। वे किसी ग़लत आंदोलन का समर्थन करके कोई सामाजिक उथल-पुथल पैदा कर सकते हैं या वे किसी उदात्त, महान आध्यात्मिक या सामाजिक संस्था की निंदा कर सकते हैं, उसे लोगों की नज़रों में गिरा सकते हैं तथा उसे मार सकते हैं। इसलिए कलम की ताकत को तलवार की ताकत से अधिक माना जाता है।

इस प्रकार समाचार पत्रों के लिये कोई नीति संहिता होनी चाहिए। यद्यपि कुछ ऐसे मानदण्ड हैं और जनसम्पर्क माध्यमों के लोग अपने पत्रकारिता के कार्य में इन मानदण्डों का जिन्हें वे एक साथ मिलकर निश्चित करते हैं, पालन करते हैं, तथापि जनसम्पर्क साधनों के अनेक लोग ऐसे हैं जो इन मानदण्डों का पालन नहीं करते।

इसलिए अब लोग, शासन तथा यहाँ तक कि जनसम्पर्क साधनों के लोग भी यह महसूस कर रहे हैं कि नैतिक सिद्धांतों की कोई ऐसी संहिता होनी चाहिए जिन्हें जनसम्पर्क माध्यमों के लोग मानें और यदि उनका उल्लंघन किया जाता है तो कोई अधिकारी ऐसा हो जो इन नैतिक नियमों की ओर उनका ध्यान आकृष्ट करे और यदि कोई व्यक्ति जानबूझ कर इन नियमों का उल्लंघन करते हैं तो उनके विरुद्ध कुछ दण्डात्मक उपाय किए जाएं।

आज हम ज्ञान का विस्फोट होता देखते हैं। नई जानकारी की लगभग बाढ़ आ रही है या यह कहिए कि प्रलय आ रहा है। कहा जाता है कि इस दर पर जानकारी आठ वर्षों में दुगुनी हो जाती है। इस जानकारी के साथ कदम मिलाकर चलना मनुष्य के लिये अधिकाधिक कठिन होता जा रहा है। यह समझा जाता है कि कम्प्यूटरों का आविष्कार तथा उपयोग इस स्थिति का एक उपचार है। किन्तु इस समाधान ने कई समस्याएँ पैदा कर दी हैं जैसे बेरोजगारी की समस्या, उच्च विशेषज्ञता की आवश्यकता और मनुष्य के मन पर कम्प्यूटरों का प्रभाव। इसके अलावा, जानकारी के द्रुत प्रवाह ने यह समस्या पैदा कर दी है कि क्या मनुष्य को ऐसी जानकारी दी जानी चाहिए ? क्या वह इसकी अंत:-प्रज्ञा तथा रचनात्मकता को नष्ट नहीं कर देगा ? किसी भी अन्य विद्या-शाखा ने इसका कोई संतोषजनक उत्तर नहीं दिया है। इसके बजाय अन्य सभी विद्या शाखाएं अपनी सहायता के लिये विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का सहारा लेती हैं। केवल आध्यात्मिक ज्ञान मनुष्य को इस संकट से बचा सकता है। क्योंकि वह उन सभी समस्याओं के निरसन द्वारा आध्यात्मिक प्रज्ञान इस सारी जानकारी की आवश्यकता को निरस्त कर देता है और ऐसा करके वह इस जानकारी को कम्प्यूटरों के स्मृति कोश में संगृहीत करने की आवश्यकता को भी निरस्त कर देता है। इस प्रकार वह मनुष्य को उस तनाव से बचा लेता है जो कि जानकारी के प्रचण्ड प्रवाह के ज़रिए उसके मस्तिष्क को ध्वस्त

कर देना चाहता है।

समाचार माध्यमों द्वारा निर्मित एक अन्य समस्या यह है कि अधिकांश समाचार पाठकों या श्रोताओं को किसी दु:खद घटना, किसी दुर्घटना, किसी संकट, किसी महासंकट, किसी हिंसापूर्ण कार्य, किसी दयनीय स्थिति आदि की जानकारी देते हैं क्योंकि समाचार पत्र जगत् में कहा जाता है कि बुरा समाचार अच्छा समाचार बन जाता है। इस बात को महसूस नहीं किया जाता कि ऐसे समाचार से मनुष्य के मन में तनाव पैदा हो जाता है। वह उसकी ऊर्जा पर दबाव डालता है। उसकी मन:स्थिति को बिगाड़ देता है या उसकी सम्वेदनशीलता को निष्प्राण कर देता है तथा उसके मन में अन्य लोगों की दयनीय स्थिति के प्रति अरुचि तथा उपेक्षा की भावना का निर्माण करता है।

किसी भी अन्य समूह के लोगों की भांति जन-सम्पर्क माध्यमों के लोगों को भी चिंतन का अभ्यास करने की आवश्यकता है ताकि वे अधिक सनसनीखेज समाचार लेने के प्रलोभन का प्रतिरोध कर सकें तथा बुरे समाचार और अच्छे समाचार के बीच संतुलन कायम रख सकें तथा शांतिपूर्ण प्रभाव वाले समाचार को अधिक समय या स्थान दे सकें। इसलिए, जनसम्पर्क माध्यमों के लोगों के लिए और उनके ज़रिए मानव जाति के लिए आध्यात्मिक शिक्षा आवश्यक है। ये माध्यम ज्ञान के सम्प्रेषक तथा समाज के सुधारक हैं और इन माध्यमों से उचित कार्य लेने के लिए या फ्यूज अथवा वोल्टेज स्टेबिलाइज़र का काम करने के लिए आध्यात्मिक ज्ञान आवश्यक है।

(14.) महिलाओं के प्रति भेदभाव

विश्व की जनसंख्या में महिलाओं और बालिकाओं का आधा हिस्सा है और वे विश्व के कार्य-घंटों में लगभग दो-तिहाई कार्य-घंटे काम करती हैं, फिर भी हज़ारों वर्षों से महिलाओं के प्रति सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक भेदभाव बढ़ता जाता है।

असमानता, अन्याय तथा भेदभाव के जो कारण हैं वे कुछ पुराने धार्मिक विश्वासों के साथ और एक जटिल ऐतिहासिक प्रक्रिया के साथ जुड़े हुए हैं । यद्यपि गृहिणी माता या बहन के रूप में नारी की भूमिका महत्वपूर्ण है और यद्यपि नारियां लगभग कोई भी कार्य उतनी ही दक्षता से कर सकती हैं जितनी दक्षता से पुरुष वर्ग करता है तथापि नारियों को निकृष्ट माना जाता है, बड़े समाज में तो वस्तुत: उन्हें माना ही नहीं जाता । उनकी स्थिति सामान्यत: अधीनस्थ की होती है और पुरुष उन पर अपना प्रभाव मानते हैं ।

यद्यपि इस ज़माने में शिक्षा के कारण तथा नारी आंदोलनों के कारण प्रवृत्तियों में कुछ परिवर्तन आया है, फिर भी नारियों को समाज में उचित सम्मान तथा उचित स्थान नहीं दिया जाता ।

नारी की निकृष्टता की भावना पुरुषों के मन में गहरी पैठ गई है और यह भावना पुरुषों के दैनंदिन जीवन, व्यवहार तथा मौखिक या लिखित अभिव्यक्तियों में प्रकट होती है। पुरुषों में नारियों पर प्रभुता पाने तथा उन्हें वस्तु या वासनापूर्ति का साधन मानने की प्रवृत्ति होती है। नारियों के प्रति इस प्रकार की प्रवृत्ति से तनाव, नैतिकता की विकृति तथा अपराध का जन्म होता है।

इसलिए ऐसी शिक्षा-प्रदान करना आवश्यक है जो कि मनुष्य का ध्यान शरीर की अपेक्षा आत्मा की ओर, किसी की शारीरिक कमज़ोरी के बजाए नैतिक तथा मानसिक गुणों की ओर आकृष्ट करें। अब वह समय आ गया है कि पुरुष समाज में नारी की समानता को स्वीकार कर ले । अब वह समय आ गया है कि नारी को समाज में उच्चतर स्थान तथा बेहतर भूमिका दी जाए ताकि गुणात्मक परिवर्तन आए । नारियां, अपने विशेष गुणों के कारण, निश्चय ही शांति स्थापित करने में सहायक सिद्ध होंगी।

(15.) तनाव तथा तनाव से सम्बद्ध रोग

आधुनिक युग को तनाव का युग कहा जाता है। द्रुत औद्योगीकरण, शहरों के विशाल विस्तार, परिवहन के तेज़ साधनों, संचार के द्रुत साधनों, परिवारों के विखंडन, दैनिक उपयोग की वस्तुओं के मूल्य में भारी वृद्धि, जीवन-स्तर में वृद्धि,जीवन में गर्दन-तोड़ प्रतिस्पर्धा आदि के कारण तनाव में बहुत वृद्धि हुई है।

तनाव या खिंचाव मनुष्य के तंत्रिका तंत्र (Nervous system), श्वसन तंत्र (Breathing system), हार्मोन तंत्र, पाचन तंत्र, रक्त संचरण तंत्र तथा वस्तुत: सभी शारीरिक तंत्रों को बुरी तरह से प्रभावित करता है। वह शरीर पर कहर ढ़ा देता है और रक्त चाप, अस्थमा, पौष्टिक अल्सर (Peptic ulcer), निद्रानाश (Insomnia), हृदय रोग तथा यहां तक कि कैंसर—जैसे मन:कायिक (Psychosomatic), रोगों को जन्म देता है।

इसका मुख्य कारण है परिवार में समायोजन (Adjustment) कर सकने की, समस्याओं को आत्मविश्वास तथा शांत-चित्त से सुलझाने की, भिन्न विचारों तथा जीवन-शैलियों वाले लोगों से समायोजन करने की, मन का संतुलन कायम रखने तथा भावनाओं पर उचित नियंत्रण रखने की और बिना विचलित या पीड़ित हुए जीवन की वास्तविकता का सामना

करने की योग्यता का अभाव है।

ये योग्यताएं मुख्यत: आध्यात्मिक संस्कृति से आती है। मनुष्य ईश्वर में विश्वास रखे तो वह जीवन के आघातों को सह सकता है और उसे सुरक्षा की भावना की प्राप्ति होती है। यदि मनुष्य में सभी लोगों के प्रति सद्भावना हो, नम्रता हो, उसकी वाणी मधुर हो; उसमें सहयोग और सौहार्द की भावना हो तो उसका चित्त अधिक शांत रहता है। ये गुण आध्यात्मिक अध्ययन से और जीवन के प्रति आध्यात्मिक दृष्टिकोण अपनाने से आते हैं।

घृणा, क्रोध, शत्रुता, ईर्ष्या, हीनता की भावना, उद्विग्नता, भावात्मक अस्थिरता, आत्म-नियंत्रण का अभाव, प्रबल काम भावना, उच्च आकांक्षा, विलासपूर्ण जीवन, संबंधों में प्रेम का अभाव आदि बातों से तनाव या खिंचाव पैदा होता है।

यह पाया गया है कि प्रभु-चिंतन (Meditation) या राजयोग, मानसिक विश्रांति की अवस्था, तनाव से मुक्ति तथा आश्वासन की भावना, सुरक्षा, आराम तथा शांति पाने में बहुत सहायक होता है। इन रोगों के उपचार के लिए तथा विभिन्न परिस्थितियों में पैदा होने वाले तनाव को दूर करने के लिए चिंतन बहुत उपयोगी पाया गया है।

(16.) बच्चों तथा युवाओं के लिए आध्यात्मिक तथा नैतिक शिक्षा का अभाव

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में उन्नति होने तथा जानकारी और ज्ञान में विशाल वृद्धि होने के कारण अब पाठ्य-चर्याओं में विभिन्न विज्ञानों तथा संबंद्ध विषयों के अध्ययन पर बल दिया जाता है। संभवत: दूसरे क्रम की प्राथमिकता अर्थशास्त्र, वाणिज्य, राजनीति विज्ञान तथा मनुष्य को किसी व्यवसाय या प्रतियोगिता के लिए तैयार करने वाले ऐसे ही विषयों को दी जाती है क्योंकि मूल्य वृद्धि तथा आर्थिक खिंचाव के इस युग में मनुष्य अवसर पाते ही स्वयं को जीवन में स्थापित कर लेना चाहता है। इस कारण और अनेक अन्य कारणों से नैतिक मूल्यों के संवर्धन को तथा शिक्षित लोगों के जीवन और चरित्र की गुणवत्ता बढ़ाने वाले ज्ञान को बहुत कम स्थान दिया जाता है या कोई स्थान दिया ही नहीं जाता। **यदि ऐसा ज्ञान प्रदान किया जाए तो कठिन समय में जब जीवन में मनुष्य के सामने समस्याएं आ जाती हैं तो वह उन्हें धैर्य, सहिष्णुता, आत्मविश्वास, निष्ठा और ईमानदारी की भावना के साथ तथा सभी लोगों के बृहत्तर कल्याण का या मानव जाति के बृहत्तर कल्याण का उचित ध्यान रखते हुए हल कर सकता है।** युवा वर्ग को ऐसी शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए जो कि संकीर्ण, विखंडनकारी, मानव-विमुख तथा पार्थिव प्रवृत्तियों को दूर करे तथा उसमें विश्व-चेतना तथा विश्व-मातृत्व की भावना पैदा करे। ऐसी शिक्षा, जो कि सामंजस्य का निर्माण करती है और न केवल इमिवषय से संबंद्ध है बल्कि स्थायी है और आंतरिक संतोष की भावना का निर्माण करती है, आध्यात्मिक शिक्षा है।

इसका उपचार है ऐसी शिक्षा प्रदान करना जो कि युवकों को अपनी ऊर्जा रचनात्मक कार्य में लगाने तथा समाज की भलाई करने योग्य बनाए। आध्यात्मिक शिक्षा का यही कार्य है, जो कि विश्व जनीन है और इसलिए वह धार्मिक शिक्षा से भिन्न है।

पृष्ठ १३ का शेष

ऐसे राज्यों के विरुद्ध, जहाँ के लोगों का एक बड़ा हिस्सा किसी भिन्न धर्म को मानता हो, अन्य गणराज्यों के साथ मिलकर संगठन या समूह बना लेते हैं। इससे विभाजनवाद और पृथकतावादी प्रवृत्तियों का प्रादुर्भाव होता है, समूहगत-हित उभरते हैं, विचारधाराओं में संघर्ष होता है और विश्व के अनेक भागों में लड़ाइयाँ होती हैं। कुछ मामलों में दो देश, जिनका धर्म एक ही होता है किंतु जिनके अपने-अपने लोगों का बड़ा हिस्सा भिन्न सम्प्रदाय वालों का होता है, आपस में भीतरी दुश्मनी रखते हैं जो कि उनकी भिन्न-भिन्न धार्मिक निष्ठाओं पर आधारित होता है। संयुक्त राष्ट्र में भी राज्यों के बीच प्रकट समूहवाद (Groupism) है, जो कि विभिन्न धर्मों या विभिन्न धार्मिक सम्प्रदायों के प्रति उनकी निष्ठाओं पर आधारित है। इज़राइल के विरुद्ध मुस्लिम राज्यों का समूह तथा इज़राइल के समर्थक राज्यों का समूह इस बात का एक उदाहरण है।

इस प्रकार धार्मिक सहिष्णुता की आवश्यकता है। विभिन्न धर्मों के मानने वाले लोगों के मन पर इतिहास की जो धूल जम गई है उसे साफ़ करना होगा। धर्मों को विश्व मातृत्व तथा मानव-सेवा के उनके पुराने विश्वासों पर वापस लेना होगा। संकीर्ण मनस्कता तथा सुधार—विरोध, भाषावाद, धर्मांधता तथा साम्प्रदायिकता से धर्म को मुक्त करना होगा और उसे एक ऐसी शक्ति बनाना होगा, जो कि मनुष्य को जागृत करती है, आत्मा को ऊँचा उठाती है, आत्मा को ईश्वर से जोड़ती है और आध्यात्मिक मूल्यों तथा प्रेम, अहिंसा और सर्वोपरि शुद्धता का आग्रह करती है। आज विश्व-धर्म (Universal Relision) की आवश्यकता है, जिसे कि मानव जाति के एकीकरण की शक्ति के रूप में कार्य करना चाहिए और जिसे मनों की एक ईश्वर के साथ एकता पर जोर देना चाहिए।

ऊर्जा का अति उपभोग, विज्ञान का ग़लत उपयोग, मानव अधिकार तथा सामाजिक एवं पारिवारिक विघटन रूपी समस्याओं का आध्यात्मिक हल

आज विश्व में ऊर्जा की इतनी अधिक खपत होती जा रही है कि ऊर्जा के स्रोत समाप्त होते जा रहे हैं। आज करोड़ों मानव अपने अधिकारों से वंचित हैं और अन्य करोड़ों अपने कर्तव्य नहीं करते। आज परिवार टूटते जा रहे हैं और समाज में फूट पड़ती जा रही है। हम यह भी देखते हैं कि विज्ञान और तकनीकी विनाशकारी सामग्री बनाने में भी सहयोग दे रही है। इन सभी विकराल समस्याओं का क्या आध्यात्मिक हल है—इसकी चर्चा इस लेख में लेखक ने की है। क्रमांक पिछले लेख के समस्या क्रमांक से आगे दिया गया है।

—सम्पादक

(17.) ऊर्जा का अति उपभोग

ऐसी प्रत्याशा थी कि 1979 और 2000 के बीच विश्व का ऊर्जा उपभोग 75 प्रतिशत बढ़ जाएगा। उपभोग-दर तेज़ी से बढ़ रही है। यह समझा जाता है कि इस दर पर इस बात की स्पष्ट संभावना है कि 50 वर्षों के भीतर तेल समाप्त हो जाएगा। इसलिए अंतर्राष्ट्रीय ऊर्जा स्थिति पर सावधानीपूर्वक विचार करना आवश्यक है।

विकसित देशों में प्रति व्यक्ति ऊर्जा का उपयोग अति अधिक है। थोड़े-से लोग भयावह रूप में अधिक मात्रा में ऊर्जा का उपभोग करते हैं और इस प्रकार ऊर्जा के संसाधनों को समाप्त कर रहे हैं, एण्ट्रापी (Entropy) बढ़ा रहे हैं, अर्थात् विश्व में शक्ति कम होती जा रही है तथा वातावरण के प्रदूषण में वृद्धि कर रहे हैं। इसलिए ऊर्जा-उपभोग को युक्तियुक्त करना तथा अति उपभोग को नियंत्रित करना आवश्यक है। ऊर्जा का अति उपभोग न केवल तृतीय विश्व के देशों के प्रति बड़ा अन्याय है बल्कि इस दर पर ऊर्जा का उपभोग मानव जाति के भविष्य के लिए अत्यन्त हानिकर है।

यद्यपि ऊर्जा के वैकल्पिक श्रोत विकसित किए जा रहे हैं तथा धीरे-धीरे परमाणु ऊर्जा का सहारा लिया जा रहा है तथापि परमाणु ऊर्जा से भी पर्यावरण की क्षति हो रही है या एण्ट्रापी में वृद्धि हो रही है।

यदि विकसित देशों के लोग मितव्ययिता के गुण को विकसित कर लें और तुलनात्मक दृष्टि से सरल जीवन प्रणाली अपना लें तो विकसित देशों में आज जिस प्रकार का उपभोक्तावाद विद्यमान है उसे नियंत्रित किया जा सकता है। इसलिए अभिवृत्तियों तथा जीवन-शैली में थोड़ा परिवर्तन करने की आवश्यकता है। मनुष्य को प्रकृति के निकट तथा अधिक मितव्ययिता-पूर्वक, सादगी से तथा कम खर्चीले ढंग से रहना सीखना होगा और अन्य लोगों के प्रति कुछ चिंतनशील होना चाहिए।

(18.) विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का गलत उपयोग

विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का उपयोग आक्रमण, आर्थिक शोषण तथा उपभोक्तावाद-भौतिकवाद के लिए अधिकाधिक किया जा रहा है। दिन-प्रतिदिन इनका उपयोग परमाणु हथियारों, मिसाइलों, पनडुब्बियों तथा गोला-बारूद के निर्माण के लिए किया जा रहा है। उद्योगपति लोग श्रमिकों के शोषण तथा अपना लाभ बढ़ाने के लिये बड़े उद्योगों का उपयोग कर रहे हैं।

किंतु यह वैज्ञानिकों तथा तकनीशियनों का दोष नहीं है। संभवत: नीतियां तैयार करने वाले राजनीतिज्ञों तथा शोषण करने वाले उद्योगपतियों को दोष दिया जाना चाहिए। फिर भी वैज्ञानिकों को पूर्णत: दोषमुक्त नहीं किया जा सकता। वे जन-संहार के हथियार बनाने के लिए अपने ज्ञान तथा कौशल को बेचने या अधिक भयावह आयुद्ध बनाने के लिए अभिप्रेत अनुसंधान परियोजनाओं में भाग लेने से इंकार कर सकते हैं।

वैज्ञानिक तथा तकनीशियन लोग यह भी सुनिश्चित कर सकते हैं कि वे जिन औद्योगिक संयंत्रों का आविष्कार, रूपांकन

(Designing) या निर्माण करने जा रहे हैं उनसे पर्यावरण प्रदूषित न हो तथा उसमें श्रमिकों के लिए सुरक्षा के पर्याप्त साधन हों तथा उनकी स्थापना गरीब श्रमिकों के शोषण के लिए न की जाए । कम-से-कम हम यह सुनना चाहेंगे कि भविष्य में वे ऐसे सभी उपक्रमों से अपना नाता तोड़ लेते हैं तथा नरसंहार तथा जन-विनाश के हथियारों के निर्माण में सहयोग नहीं देते ।

नि:स्संदेह विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी ने हमें दैनिक उपयोग की असंख्य वस्तुएं प्रचुर मात्रा में दी हैं और जीवन को अधिक आसान तथा सुखद बना दिया है । तथापि पृथ्वी की दीर्घकालीन हानि, मानवीय मूल्यों तथा मानव जाति के विनाश को रोकने के लिए तथा ग्रामीण जनता के लिए उपयोगी आविष्कार करके गरीब वर्गों के सामाजिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक विकास के संवर्धन के लिए सभी प्रौद्योगिकियों के विचारपूर्ण तथा सावधानीपूर्ण प्रयोग का अभाव है। यदि विज्ञान तथा आध्यात्मिकता साथ-साथ चलें तो इस स्थिति में सुधार हो सकता है । यदि वैज्ञानिकों को अपने ज्ञान का उपयोग मानव जाति की शांतिपूर्ण प्रगति के लिए करना हो तो उन्हें चिंतन के ज़रिए मन की शांति प्राप्त करनी होगी। केवल शांत मन ही अपने ज्ञान का उपयोग शांतिपूर्ण प्रयोजनों के लिए कर सकता है और यह तथ्य उल्लेखनीय है कि शांति आत्मा का एक गुण है या आत्मा की एक अभिव्यक्ति है । वह एक अभौतिक, अ-शारीरिक वास्तविकता है । शांति की अवस्था आध्यात्मिक ज्ञान को व्यवहार में लाकर पुन: स्थापित की जा सकती है । आध्यात्मिक मन वाला वैज्ञानिक सभी लोगों के कल्याण तथा सुख के लिये अपने प्रौद्योगिकीय कौशल का उपयोग करेगा तथा वस्तुएं निर्मित करेगा ।

(19.) मानव-अधिकार तथा कर्तव्य

मानव-अधिकारों के उल्लंघन की घटनाएं लगभग पूरे विश्व में हो रही हैं । शासनों तथा संस्थाओं द्वारा मानव-अधिकारों का उल्लंघन किया जा रहा है। सचेतन विरोधियों, राजनैतिक विरोधियों, जन-संपर्क माध्यमों वाले विरोधी व्यक्तियों तथा अन्य लोगों का उत्पीड़न हो रहा है, उन्हें गैर-कानूनी ढंग से जेलों में बंद कर दिया जाता है, उनकी संपत्ति ज़ब्त कर ली जाती है तथा उन्हें यंत्रणा दी जाती है । बुद्धिजीवियों, पार्टी के सक्रिय कार्यकर्ताओं आदि को परेशान तथा उत्पीड़न करने के लिए विभिन्न कानूनी तथा दमनकारी उपाय अपनाए जाते हैं ।

मानव-अधिकारों के उल्लंघन को रोकने के अंतर्राष्ट्रीय कानूनी साधन अपर्याप्त तथा निष्प्रभावी हैं क्योंकि उनके प्रवर्तन के लिये कोई प्रवर्तन-तंत्र नहीं है । मानव-अधिकारों संबंधी करारों का पालन करने के लिए मानव-अधिकार निकाय (Human Right institutions) शासनों पर दबाव डालते हैं किन्तु बहुधा वे निष्फल होते हैं । शासनों के समूहों द्वारा ऐसे शासनों के विरुद्ध लगाई गई आर्थिक बंदिशें भी मानव-अधिकारों का पालन कराने में सफल नहीं होतीं।

इसलिए मानव-अधिकारों का आदर अधिकतर इस बात पर निर्भर होता है कि शासन मानव-अधिकारों संबंधी सिफारिशें तथा करारों को क्रियांवित करने की कितनी इच्छुक हैं ।

इसलिए इस बात पर बहुत अधिक जोर देने की आवश्यकता है कि राष्ट्र व्यक्तियों तथा लोगों के मानव-अधिकारों का सम्मान सुनिश्चित करने तथा मानव-अधिकारों का संवर्धन करने की अपनी प्रतिबद्धता को दोहराएं । इसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि लोगों में जागृति पैदा की जाए कि उनके अधिकार तथा कर्तव्य क्या हैं और नागरिकों के रूप में, संस्थाओं और समुदायों के सदस्यों के रूप में या अधिकारियों अथवा शासन प्रमुखों के रूप में उनका पालन करने के क्या लाभ हैं ? इस विषय पर उनके मन को शिक्षित किए बिना तथा इच्छा जागृत किये बिना हम यह प्रत्याशा नहीं कर सकते कि इन अधिकारों का पूरे विश्व में या बड़े पैमाने पर आदर होगा । एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण अधिकार अर्थात् पूर्ण शुद्धता, शांति तथा समृद्धि का ईश्वर-पिता से प्राप्त जन्मसिद्ध अधिकार का अधिकांश लोगों को ज्ञान नहीं है और उसे आध्यात्मिक शिक्षा के बिना प्राप्त नहीं किया जा सकता।

यह आवश्यक है कि इसके पहले कि मनुष्य अपने अधिकार मांगे उसे सही होना चाहिए । इसके लिए उचित कार्य क्या है और गलत कार्य क्या है इस बात का ज्ञान होना चाहिए । अपने अधिकार पाने के लिए मनुष्य को गलत रवैया या गलत मार्ग नहीं अपनाना चाहिए क्योंकि किसी गलत कार्य से बुरे कार्यों का सिलसिला चल पड़ता है । अपने अधिकारों का ज्ञान, अन्य लोगों के अधिकारों का आदर तथा उचित मार्ग अपनाना आध्यात्मिक शिक्षा का एक भाग है।

(20.) सामाजिक विघटन तथा परिवार का टूटना

आज मानव जाति के सामने जो मुख्य समस्या उपस्थित है, वह है सामाजिक विघटन तथा परिवार के टूट जाने की समस्या । हम किसी देश में तो राजनैतिक कलह देखते हैं, तो किसी देश में साम्प्रदायिक लड़ाइयां देखते हैं । तो किसी

देश में वर्ग-संघर्ष देखते हैं । हमारे चारों ओर विखंडन का दृश्य है । हड़तालें हो रही हैं, विध्वंसक क्रियाकलाप चल रहे हैं, लोगों और पुलिस वालों के बीच मुठभेड़ें हो रही हैं, राजनैतिक अस्थिरता है तथा सर्वत्र भाषायी, धार्मिक, राजनैतिक प्रजातीय, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा अन्य आधारों पर परस्पर विरोध है । समाज भग्न हो गया है और बिखर गया है । उसने संस्थात्मक विश्वसनीयता खो दी है। भूमिगत समाचार पत्र (The under–ground Press), तथा युयुत्सु समूह मतभेद (militant groups), विवाद, कलह तथा संघर्ष पैदा करने में व्यस्त हैं । प्रत्येक व्यक्ति राष्ट्रीय एकीकरण तथा मानव एकता की आवश्यकता महसूस करता है किन्तु कोई भी व्यक्ति इस समस्या के समाधान के लिए कुछ करने योग्य नहीं दिखाई देता ।

असमानता, अन्याय, असमान वितरण, शोषण स्वार्थपूर्ण इरादों, कानून के प्रति नितांत अनादर तथा एक-दूसरे के प्रति प्रेम तथा सम्मान के अभाव के कारण संघर्षों तथा विखंडनों की संख्या बढ़ रही है ।

प्राय: सभी धर्म भी लोगों को जोड़े रखने की शक्ति खो चुके हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि वे पुराने पड़ चुके हैं तथा वर्तमान सामाजिक स्थितियों से सुसंगत नहीं हैं और उनके अनेक सिद्धांत विश्वसनीयता खो चुके हैं । प्राय: धार्मिक उपदेशक लोगों को पर्याप्त नैतिक मार्गदर्शन नहीं दे पाते और लोगों को प्रेरित नहीं कर पाते क्योंकि वे स्वयं को उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत नहीं करते हैं । ऐसा प्रतीत होता है कि धर्म पाखण्डपूर्ण तथा असहिष्णु हो गए हैं और अधिकांश उपदेशक वर्ग यदि भ्रष्ट नहीं है तो धनमनस्क (money–minded) अवश्य प्रतीत होता है। इसलिए आज धर्म की शक्ति भी लोगों को जोड़ने वाली शक्ति के रूप में कार्य नहीं आती और जहां वे अनुयायियों को जोड़ने वाली शक्तियों के रूप में कार्य करते हैं वहां वे दूसरों के प्रति बड़ी आसानी से कठोर हो जाते हैं और, इस प्रकार, अपने ही लोगों में कलह एवं शाखा-भेद पैदा कर देते हैं या अन्य लोगों से टकराव पैदा कर देते हैं । इसलिए हम विश्व-परिदृश्य में या तो मूल प्रमाणवादी (Fundamentalists) या उग्र शासन प्रणालियां पाते हैं या फिर पश्चिमी ढंग के धर्मनिरपेक्ष (Secular) एवं नैतिकता निर्पेक्षी, राजनीतिक मतों का उदय देखते हैं । बाद वाले मामले में हम यह पाते हैं कि राजकीय मताग्रह तथा नीति-निरपेक्ष शासन प्रणालियों का प्रादुर्भाव हुआ है और वे लोगों में भावात्मक एकीकरण नहीं कर सके हैं, जबकि पहले वाले मामले में मूल प्रमाणवादी (fundamentalist) शासन-प्रणालियों के बीच या अन्य लोगों के साथ संघर्ष हुए हैं ।

अन्य स्थानों में साम्यवाद जैसी अनीशवरवादी विचार-धाराओं को अपनाया गया है किन्तु समाज को नैतिक आधार प्रदान करने के लिए कुछ भी नहीं किया जाता । इसलिए, जहां रूढ़िवादी ढंग से निर्वाचित या पुराने पड़ चुके धर्म ने कुछ स्थानों में विभाजन तथा उदासीनता को जन्म दिया है, वहां आर्थिक विचारधारा या प्रजातीय तथा सांस्कृतिक विभिन्नताओं के आधार पर विखंडन हुआ है । इस प्रकार विश्व अनेक विभाजनकारी कारकों के कारण खंडित हो रहा है ।

परिवार की पारंपरिक संरचना में दरार आ जाने के कारण परिवार प्रणाली टूट रही है । विश्व में लाखों पिताहीन बच्चे और टूटे हुए परिवार हैं । तलाक के मामले भी बढ़ते जा रहे हैं । सांस्कृतिक आक्रमण हो रहे हैं तथा परिवार पर विनाशकारी प्रभाव पड़ रहा है और लाखों लोग पारिवारिक प्रेम तथा देखभाल से वंचित होकर एकांकी जीवन बिता रहे हैं । इससे असमायोजन तथा मानसिक अवसाद (Mental depression) जैसी अनेक समस्याएं पैदा हो गई हैं । लोग अपना तादात्म्य खो चुके हैं तथा उनमें वंचन तथा एकांकीपन की भावना भर गई है । इस प्रकार का तनाव अन्य समस्याओं को जन्म देता है ।

समाज को एकीकृत तथा बेहतर आकार में रखने के लिए कानून तथा विधान इतना बढ़ गया है कि मनुष्य अधिनियमों के खंडों तथा उपखंडों में हुई वृद्धि के साथ कदम मिलाकर नहीं चल सकता और फिर भी हम यह पाते हैं कि कानून का बहुत अनादर होता है । कानून रहित कानून तथा अंतर्राष्ट्रीय अव्यवस्था को पर्याप्त मात्रा में देखा जा सकता है । अनेक सभ्य राज्य उनके द्वारा हस्ताक्षरित प्रसंविदाओं, करारों या कानूनी लिखतों का पालन नहीं करते । अनेक व्यक्ति भी कानून की गिरफ्त से बचने के रास्ते ढूंढ़ते हैं । इस प्रकार कानून का पालन या सत्ता का भय नहीं रह गया है और कानून विध्वंसकारी तत्वों को विघटन करने से नहीं रोक सका है ।

प्रत्येक राजनीतिक दल के भीतर विभाजनकारी प्रवृत्तियां होती हैं और कोई भी राजनैतिक दल किसी अन्य राजनैतिक दल की आलोचना करने से और लोगों के सामने उसके द्वारा किये गये और न किये गये कार्यों का बखान करने का मौका हाथ से नहीं जाने देता । राजनैतिक हित भी प्रबल विभाजनकारी हित है।

इसलिए ऐसी शिक्षा आवश्यक है जो कि प्रेम का संवर्धन करे, भावात्मक एकीकरण लाए, जिसमें धर्म को जोड़ने वाली शक्ति हो, जो वैचारिक एकता लाए, जो मनुष्य को आध्यात्मिकता के आधार पर मानव जाति के बृहत्तर

(शेष पृष्ठ ११ पर)

प्रभु-मिलन के 50 वर्ष

बी.के. सूरजकुमार, माउण्ट आबू

कहाँ एक ओर प्रभु-मिलन की तीव्र तड़पन, उसके लिए सर्वस्व त्याग, जंगलों की भटकन, मन्दिरों के फेरे, कठिन तपस्याएँ; और कहाँ प्रभु की छत्रछाया में पलता जीवन, उसके प्यार में संजोया मन, उनकी शीतल वाणी से हिलोरे लेता तन और उनकी परम पावन दृष्टि से निखरता जीवन !! कहाँ वे सन्यासी जो केवल उपाधियों के नशे में चूर, ईश्वरीय आनन्दों से दूर, परम शान्ति के प्यासे, और कहाँ वे ब्रह्मावत्स जो प्रभु के दिव्य कर्त्तव्यों को देख देखकर ईश्वरीय रसों से ओत-प्रोत !!! कहाँ वे शास्त्रार्थ महारथी जो अपनी विद्वता के अहं के कारण सत्य से दूर और कहाँ वे भगवान के बच्चे, 'सत्य' जिनका जीवन बन गया।

कितना महान आश्चर्य.... एक ओर खोज व अप्राप्ति, दूसरी ओर मिलन और सर्वस्व प्राप्ति। मिलन भी एक दो क्षण का नहीं, एक दो दिन का नहीं, पूरे 50 वर्ष का। शायद यह सत्य, उनको तो कल्पना लगे जो क्षणिक प्रभु-दर्शन को भी अत्यन्त कठिन मान रहे हैं। उनका सोचना भी सत्य है, क्योंकि जब तक प्रभु स्वयं प्रत्यक्ष न हो, न कोई उसे पूर्णत: जान सकता और न ही कोई मिलन का आनन्द पा सकता।

प्रभु इस धरा पर अपने ब्रह्मलोक से अवतरित हुए, अपना दिव्य कर्त्तव्य करने के लिए और उन्होंने प्रजापिता ब्रह्मा के तन में प्रविष्ठ होकर सत्य ज्ञान देकर मनुष्य को पावनता की राह पर अग्रसर किया। जिन्होंने उन्हें पहचाना, उनसे नाता जोड़ा और माया से मुख मोड़ा, वे उनके हो गये और बाकी उन्हें न पहचानकर अब तक भी भटक ही रहे हैं।

प्रसिद्ध है कि प्रभु मिलन, जन्म जन्म की भक्ति, तपस्या व पुण्यकर्मों के बाद ही होता है। तो जिन्होंने अपनी भक्ति पूर्ण कर ली, उन्हें भगवान मिल गये। कलियुग के अन्तिम काल में इस संगमयुग पर वे आत्माएं कितनी महान हैं जो 50 वर्ष से ईश-मिलन का सर्वोच्च परम आनन्द ग्रहण करती आ रही हैं। यद्यपि 'परम आनन्द' की अनुभूतियों को शब्दों में नहीं बाँधा जा सकता। इसके रस को तो केवल अनुभवी ही जानें, तथापि उन अनुभवों को हम शब्दों में बांधने का प्रयास करेंगे।

यों तो इन पिछले 50 वर्षों में (1937-1987 तक) जो भी आत्माएं भगवान के साथ रहीं उनमें से सभी ने अपनी अपनी क्षमता अनुसार भिन्न भिन्न अनुभव किये। परन्तु उन सभी के अनुभवों का यहां हम सामूहिक रूप से ज़िक्र करेंगे। जन्म-जन्म भक्ति करते हुए, जिसने जो कुछ भगवान से माँगा था, भगवान ने आकर उन सभी की इच्छाएँ पूर्ण की।

किसी ने कहा था—

हे भगवन्, आप जब इस धरा पर आओ, हमें अपना वत्स बना लेना। उनकी इच्छा पूर्ण हुई।

किसी ने कहा था—

हे प्रभु, जब आप इस धरा पर आओ, हमें भी सूचित करना, हम तो आपके पास ही रहेंगे। बस हमें और कुछ नहीं चाहिए। भगवान ने उन्हें इस नरक से निकाल कर अपनी छत्रछाया में ले लिया।

किसी ने कहा था—

हे परमपिता, जब आप आओ हमें सम्पूर्ण सत्य ज्ञान देना। हम आपसे सम्मुख गीता-ज्ञान सुनना चाहते हैं। उन्हें भी तथास्तु का वरदान मिला। उन्होंने सम्मुख बैठकर श्री मुख से गीता-ज्ञान सुना।

किसी ने कहा था—

जब भी आप आओगे, हम आप पर बलिहार होंगे। अर्जुन की तरह आपको अपना सखा बनाकर आपके साथ ही खेलेंगे और खायेंगे,उनकी भी इच्छा पूर्ण हुई।

परन्तु ध्यान रहे, भगवान निराकार हैं अर्थात देह रहित व जन्म-मरण से न्यारे हैं। अत: वे देहधारी नहीं बने परन्तु वे ब्रह्मा-तन द्वारा मुख्य 3 रूप से प्रत्यक्ष हुए। परम पिता, परम शिक्षक व परम सद्गुरू...। तो कोई उनका बच्चा बनकर उनकी गोद में खेला, कोई शिक्षक रूप से उनसे गीता ज्ञान सुनकर सम्पूर्ण ज्ञान को प्राप्त हुआ, किसी ने उनसे सद्गुरू रूप में मुक्ति व जीवनमुक्ति का वरदान प्राप्त किया। किसी ने उन्हें मित्र बना लिया, किसी ने साजन और किसी ने अपना सब कुछ.....।

"ईश-मिलन के कुछ अनुभव"

• जो उनके बच्चे बने, वे माया से बच गये—प्रभु-

मिलन का यही प्रत्यक्ष प्रमाण है कि उनके बच्चे बनते ही आत्मा इतनी शक्तिशाली हो गई थी जो अजेय माया को परास्त कर सकी। कलियुग के मायावी प्रवाह को तोड़कर, वे पावनता की दिव्य राह पर चल पड़ी। उन्होंने अपने मन, वचन व कर्म को संम्पूर्ण पावन करने की प्रतिज्ञा कर ली। यह सब कुछ सहज रूप से होने लगा। जैसे कि सर्वशक्तिवान ने अपने बच्चों के ऊपर छत्रछाया लगा दी जिसमें माया प्रवेश करने का साहस न कर सकी। तो जबकि कलियुग में चारों ओर माया की अग्नि दहक रही है, ये प्रभु-मिलन में मग्न आत्माएँ उसकी आँच से भी मुक्त रहीं।

भगवान के वत्स मानो कलियुग में नहीं रहते—

जब से इन महान पुण्य-आत्माओं को भगवान मिले, कलियुग इनके लिए तो मानो समाप्त हो गया। ये कलियुग में कमल समान निर्लिप्त रहते हैं। ये आत्माएँ कलियुग में रही भी कहाँ, ये तो अपने परमप्रिय प्रभु के ही साथ रहे। कल्पना करो, कितना सुखद है—प्रभु के संग रहना। जिसके बाद किसी अन्य के संग रहना अच्छा नहीं लगता। अन्य कहीं भी सुख व सन्तोष नहीं मिलता। प्रभु-मिलन होने पर ये महान विभूतियाँ कलियुग के दुखों, अशान्ति, तनाव व दूषित जीवन से ऊपर रहते आये हैं।

इन्होंने भगवान से सम्मुख गीता ज्ञान सुना—

लोग वेदों में सत्य ढूँढ़ रहे हैं, भागवत, रामायण सुन सुनकर प्रसन्न हो रहे हैं और इधर 50 वर्ष से ब्रह्मा-वत्स, ज्ञान सागर परमात्मा के सम्पूर्ण ज्ञान-अमृत द्वारा अमरत्व को प्राप्त कर रहे हैं। सत्य को ढूँढ़ा नहीं जा सकता, सत्य तो परम सत्य के पास ही है। और वही परमशिक्षक बन कर सत्य ज्ञान सुनाते हैं। इसलिए सम्मुख भगवान से गीता-ज्ञान सुनने वालों को शास्त्रों की भला क्या आवश्यकता। परमात्मा की वाणी सम्मुख सुनकर आत्मा को जो सन्तोष होता है, वह शास्त्रवाणी सुनकर नहीं होता। ईश्वरीय महावाक्य सुनकर जिस अतीन्द्रिय सुख की प्राप्ति होती है, वह कठिन तपस्याओं के द्वारा नहीं होती। ज्ञान की मधुर मुरली की तान पर रोम रोम खिल उठता है, भटकन समाप्त हो जाती है और मन गा उठता है—"पाना था सो पा लिया"।

इन्होंने 50 वर्ष परमात्मा का प्यार पाया—

भगवान प्यार का सागर है। भक्त गाते हैं, परन्तु इसका अनुभव ? अनुभव किया विश्व से चुनी हुई कुछ आत्माओं ने। भक्त तो भगवान के प्यार में खो जाना चाहते हैं, परन्तु अनुभव तो यह है कि अब भगवान अपने वत्सों के प्यार में खोये देखे जाते हैं। प्यार के बन्धन में बन्धते उन्हें देखा गया। उनकी प्यार भरी नज़रों में पूरे 5000 वर्ष का प्यार समाया रहता है। जिन्होंने उनका प्यार पाया, वे धन्य धन्य हो गये और उनके प्यार में इतने लीन हो गये कि लगा मानो आत्मा परमात्मा में लीन हो गई हो। 50 वर्ष के ईश्वरीय प्यार को 50 शब्दों में बाँधना सम्भव नहीं। वही जानें जो इस विशुद्ध प्रेम में संसार भुला बैठे और अब भी इसी प्यार में अपना सर्वस्व कुर्बान कर रहे हैं। इस ईश्वरीय प्यार की चर्चा में तो अनेक ग्रन्थ लिखे जा सकते हैं।

50 वर्ष तक प्रभु की मार्ग-दर्शना मिली—

परमात्मा के दर्शन की तो कोई खास बात ही नहीं, इन्हें तो प्रत्येक कदम पर ईश्वरीय मत प्राप्त हुई। जिस प्रभु से मिलने को तड़पते थे, उनके इतने समीप आ गये कि वह प्रतिपल मार्ग-प्रदर्शक बना गये। परिणामत: प्रत्येक कर्म दिव्य बन गया। आत्मा के पाप घुलने लगे और पापकर्म बन्द हो गये। कदम सफलता की ओर चल पड़े। मनुष्य अच्छी राय पाने के लिए भी उत्सुक रहते हैं और यहाँ तो स्वयं भगवान ने सर्वश्रेष्ठ राय दी।

50 वर्ष में वरदानों से झोली भरी—

भक्ति में भक्त देवियों से वरदान माँगने जाते हैं, घोर तपस्या करते हैं, ब्रह्मचर्य अपनाते हैं। परन्तु देवियों ने वरदान कब व कहाँ से प्राप्त किये ? पुरुषोत्तम संगमयुग पर वरदाता भगवान से। यही वे प्रसिद्ध शक्तियाँ हैं। इनका ये स्वरूप शीघ्र ही प्रसिद्ध होगा और भक्त चेतन रूप में अपनी अपनी देवियों के दर्शन कर सकेंगे।

इन्होंने वरदानों से झोली कैसे भरी। जो वत्स परमात्मा के आज्ञाकारी बने, जिन्होंने अपने श्रेष्ठ कर्मों से प्रभु के दिल को जीता; और जिन्होंने सम्पूर्ण पवित्र बनकर एकाग्रता से योग अभ्यास किया—ऐसी तपस्वी रूहों को भगवान ने 'वरदानी भव' का वरदान दिया। किसी को 'विघ्न-विनाशक' का, किसी को 'सफलता' का, किसी को 'वाचा की सिद्धि का', किसी को 'संकल्प की सिद्धि' का और किसी को 'शक्ति भव' का वरदान दिया।

इसी प्रकार परमात्मा से अनेकों को दिव्य दृष्टि का वरदान प्राप्त हुआ और वे ध्यान अवस्था में विभिन्न साक्षात्कार कर सकीं और दिव्य अनुभव पा सकीं।

भगवान से वार्तालाप का आनन्द मिला—

तपस्वी तो केवल भगवान की कोई दिव्य वाणी सुनने को

शेष पृष्ठ २६ पर

नगरों का विस्तार, इतिहास का पूर्वाग्रह-युक्त लेखन बढ़ती हुई मंहगाई, नैतिक तथा आध्यात्मिक अशिक्षा रूपी समस्याओं का हल

आज नगर इतने बढ़ रहे हैं कि प्रदूषण और अपराध को बढ़ावा दे रहे हैं, इतिहास की पुस्तकें जातियों और राष्ट्रों में कटुता पैदा करती हैं, मंहगाई ऐसी बढ़ रही है कि ग़रीब की कमर टूट गयी है और आध्यात्मिक ज्ञान प्राय: लुप्त है। लीजिए अब इन समस्याओं का समाधान सुनें।

—सम्पादक

(21.) नगरों का अति विस्तार

नगर तेज़ी-से महानगर तथा विराट नगर बनते जा रहे हैं और जैसे-जैसे वे बढ़ते हैं वैसे-वैसे वे आसपास के गांवों तथा उपनगरों को समेटते जा रहे हैं । क्षैतिज विस्तार तथा ऊर्ध्व-विस्तार अनेक समस्याएं पैदा कर रहा है । प्रतिदिन भीड़भाड़, शोर-शराबे से पैदा होने वाले प्रदूषण तथा मोटर-गाड़ियों से निकलने वाले धुएं से पैदा होने वाले प्रदूषण में वृद्धि हो रही है । जीवन इतना व्यस्त हो गया है कि मनुष्य के पास अपने पड़ोसियों को जानने और उनसे बात करने का भी समय नहीं है ।

मनुष्य को अपने घर से कार्य के स्थान तक जाने या लोगों से मिलने के लिये प्रतिदिन लम्बी यात्रा करनी पड़ती है । जीवन इतना व्यस्त हो गया है कि मनुष्य के पास अपने पड़ोसियों को जानने या उनसे बात करने तक का समय नहीं है। शहरों का अति विस्तार होने के कारण अपराध भी कई गुने बढ़ गया है और दुर्घटनाएं भी बढ़ गई हैं । जीवन कृत्रिम और यंत्रवत् हो गया है तथा अनेक बातों पर निर्भर हो गया है । समग्र नगरप्रणाली इतनी जटिल है और बातें एक-दूसरे पर इतनी निर्भर हो गई हैं कि यदि एक प्रणाली असफल हो जाती है तो देर-सबेर अन्य प्रणालियां भी ठप्प पड़ जाती हैं । शहरों में अनेक चीज़ों की कमी के कारण, तेज़ गति के कारण, प्रतिस्पर्धा के कारण तथा अपराधों के कारण मनुष्य का जीवन तनाव से भर गया है।

इसलिए लोगों को यह बताने की आवश्यकता है कि प्रकृति की निकटता में बिताए जाने वाले जीवन के क्या लाभ हैं । लोगों को आंतरिक सुख के ऐसे संसाधन देने की भी आवश्यकता है जिनके सहारे लोग मनोरंजन के नीति-निरपेक्ष, अनैतिक तथा विकृतिजनक साधनों के आकर्षण से बच सकें जो कि बड़े शहरों में पाए जाते हैं तथा शहरी जीवन के अन्य भौतिकवादी आकर्षणों से दूर रह सकें । 'विकास' क्या है इस विषय में हमारे दृष्टिकोण को बदलने की भी आवश्यकता है और शिक्षा-प्रणाली को भी बदलने की आवश्यकता है जो कि छात्रों को सफेदपोश नौकरियों तथा संभ्रांत वर्गीय नौकरियों के लिये तैयार करते हैं जिनके लिए वे रोजगार पाने के लिए शहरों में आते हैं ।

(22.) इतिहास का पूर्वाग्रह-युक्त तथा विकृत लेखन

इतिहास के अधिकतर ग्रंथ मानव-जाति के भूतकाल का ग़लत, अपूर्ण तथा काल्पनिक चित्र प्रस्तुत करते हैं । वे किसी समुदाय के अस्तित्व का पूर्वग्रहयुक्त, विकृत या बिल्कुल ग़लत चित्र प्रस्तुत करते हैं । वे मानव जाति की उत्पत्ति के ग़लत सिद्धांत या किसी विशिष्ट राष्ट्र के पूर्व-इतिहास (Proto–history) या आदि-इतिहास (Pre–history) का गलत वर्णन प्रस्तुत करते हैं । इतिहास के दर्शन (Philosophy of History) भी मनुष्य के समक्ष इतिहास की घटनाओं के स्वरूप का वास्तववादी चित्र प्रस्तुत नहीं करते । इतिहास के ग्रंथ आत्मा की विद्यमानता और उसके पुनर्जन्म की प्रक्रिया में जो विश्वास है उन पर विचार नहीं करते । इस प्रकार वे मानव जाति के अस्तित्व की कथा तथा मानव जाति की क्रियाओं को कोई अर्थ नहीं दे पाते । वे मानव जाति के भूतकाल तथा उसके वर्तमान विश्वव्यापी कार्यों के आधार पर मनुष्य के ध्येय या मानव जाति की भवितव्यता का कोई चित्र प्रस्तुत नहीं करते ।

इसके अतिरिक्त इतिहास के ग्रंथ एक संस्कृति, समुदाय या राष्ट्र के दूसरी संस्कृति, दूसरे समुदाय या राष्ट्र के प्रति जो मत

या विचार होते हैं उन्हें ही प्रतिबिम्बित करते हैं । ऐतिहासिक घटनाएं जान-बूझकर या असावधानीपूर्वक ऐसे ढंग से लिखी जाती हैं कि ऐसे प्रतीत होता है कि एक देश, समुदाय या सांस्कृतिक समूह दूसरे देश, समुदाय या सांस्कृतिक समूह से श्रेष्ठ है । ये ग्रंथ देशों, समुदायों या समूहों के बीच स्थायी शत्रुता निर्मित कर देते हैं । ऐसे गलत लेखन से राष्ट्रों, समुदायों तथा सांस्कृतिक या प्रजातीय समूहों के बीच तनाव निर्मित हो जाते हैं, प्रबलित हो जाते हैं या उग्र हो जाते हैं । वर्तमान पीढ़ियों के बाद जो पीढ़ियां आती हैं वे भी पूर्वग्रहयुक्त होती हैं और इस प्रकार बैर या कलह सैंकड़ों-वर्षों तक चलता रहता है । इस प्रकार इतिहास के ग्रंथ राष्ट्रों तथा समूहों के प्रति शत्रुता तथा दुराग्रहपूर्ण विचारों या मतों की सृष्टि करते हैं और उन्हें कायम रखते हैं ।

इसलिए, मानव जाति के यथार्थवादी इतिहास की आवश्यकता है, जिसमें सभी प्रधान-वर्गों को उचित स्थान दिया गया हो तथा विश्व-नाटक में सभी की भूमिका दर्शायी गई हो । ऐसे ऐतिहासिक ज्ञान से मनुष्य को एक ऐसा दृष्टिकोण मिलेगा जिससे समझदारी, प्रेम, मित्रता, एकता, सहानुभूति तथा सहयोग का निर्माण होगा तथा मनुष्य भावी गलतियों से बच जाएगा । ऐसा ऐतिहासिक ज्ञान मनुष्य को अस्तित्व तथा कर्म की समझ देगा और एक प्रेरणाप्रद लक्ष्य देगा तथा एक वैचारिक प्रणाली का चित्र देगा । केवल इसी से सामंजस्य तथा शांति का निर्माण हो सकेगा ।

(23.) कमरतोड मंहगाई, मुद्रा स्फीति (Inflation)

पूर्ववर्ती शताब्दी के दौरान स्फीति (Inflation) की कोई बड़ी घटना नहीं हुई और प्रथम विश्व-युद्ध के बाद की अवधि तक भी मूल्य-वृद्धि एक नगण्य समस्या थी। उसके बाद स्फीति (कमर-तोड़ मंहगाई) बढ़ती ही गई है । पिछले छह या उससे भी अधिक वर्षों के दौरान मूल्य-स्तर में और निर्वाह खर्च में सतत् वृद्धि होती रही है । स्वीकृति सामान्य मूल्य सूचकांक (Accepted general price–index) से मापने पर मुद्रा की क्रय-शक्ति निरंतर कम होती रही है।

सातवें दशक में, मूल्य-वृद्धि बहुत बढ़ी है और आठवें तथा नवें दशक में अनेक देशों में द्वि-अंकीय स्फीति देखी गई है। निर्वाह-खर्च सूचकांक (cost of living index) के आधार पर मापने पर भारत में रुपये का मूल्य, जो कि सन् 1951 में 95 पैसे था, अगस्त 1975 में घटकर 26 पैसे रह गया और 1985 में घटकर लगभग 14 पैसे रह गया । देशों में, जैसे अर्जेण्टाइना तथा इज़राइल में, नवें दशक के मध्य में स्फीति 400 प्रतिशत के स्तर पर पहुंच गई।

स्फीतिकारी प्रवृत्तियों (Inflationary trends) के भारी सामाजिक, राजनैतिक तथा नैतिक परिणाम हुए। प्राय: ऊंची आमदनी वाले लोगों ने धन का संचय कर लिया, वे तथा अन्य भी कई लोग काले धन के सहारे अपना आर्थिक स्तर कायम रख सके किन्तु निश्चित आमदनी वाले लोग और बहुत से धनी लोग भी समृद्धि प्राप्त करने के आसान उपाय अपनाने लगे, या उच्चतर आर्थिक स्तर प्राप्त करने के लिए गलत तरीके अपनाने लगे । इस प्रकार कई लोग बेईमानी-भरे कदम उठाने लगे या आर्थिक अपराधों में लिप्त हो गये । आज हम लगभग सर्वत्र यह देखते हैं कि कई लोग धन कमाने के अनुचित, बेईमानी-भरे या नाजायज़ उपाय अपना रहे हैं । जिन लोगों की अंतर्रात्मा उन्हें बेईमानी करने से रोकती है, वे लोग स्वयं को लाचार पाते हैं और हमेशा दबावों में रहते हैं । वे कहते हैं: ''चूहों की इस दौड़ में हम कब तक ईमानदार बने रहकर बढ़ते हुए जीवन निर्वाह खर्च को पूरा कर सकते हैं और अपना आर्थिक स्तर बनाए रख सकते हैं ?''

स्फीति का एक परिणाम यह हुआ है कि जिन लोगों के पास स्थावर सम्पदा थी या जिनके पास कारखानों—जैसे उत्पादन के कुछ साधन थे, वे लोग बड़ी तेज़ी-से अमीर बनते गए जबकि जो लोग गरीब थे, वे और भी गरीब बन गए । इस प्रकार अमीर और गरीब के बीच का अंतर बहुत बढ़ गया ।

जो लोग आसान तरीकों से धन कमा चुके थे या काला धन इकट्ठा कर चुके थे, उनमें से कई लोग धन को ऐसी चीज़ों पर खर्च करने लगे कि उनके नैतिक स्तर में गिरावट आ गई । जिन लोगों के पास कम धन था उनमें कुंठा और क्रोध के लक्षण दिखाई देने लगे । इस प्रकार, सर्वत्र सद्गुणों की हानि हुई तथा समाज के उन वर्गों में तनाव व्याप्त हो गया जो कि बढ़ती हुई कीमतों का सामना नहीं कर सकते थे और उन वर्गों में भी तनाव व्याप्त हो गया, जिन्होंने अनुचित साधनों से धन तो इकट्ठा कर लिया था किन्तु चिंतित थे कि उसे कैसे छिपाएं तथा उसका उपयोग कैसे करें।

उच्च मूल्य-वृद्धि के कारण कारखानों तथा शासकीय कार्यालयों में हड़तालें हुईं क्योंकि अब कर्मचारियों के पास सौदा करने की सामूहिक शक्ति थी । इन हड़तालों से, श्रम-घंटों (work–hours) की, उत्पादन की तथा लाभ की भारी हानि हुई । हड़तालों से विधि तथा व्यवस्था सम्बंधी अनेक समस्याएं भी पैदा हुईं ।

मजदूरी या वेतन में वृद्धि, शासन तथा जनता के बीच के सम्बंधों और उपभोक्ता तथा विक्रेता के बीच के सम्बंधों और सरकार तथा जनता के बीच के सम्बंधों में तनाव आया तथा धन सम्बंधी मामले अब लोगों का ध्यान अधिक आकृष्ट करते हैं।

इस सतत् मूल्य-वृद्धि के अनेक अन्य परिणाम हैं। उदाहरणार्थ, उनमें से एक परिणाम यह है कि ब्याज-रहित पेन्शन सीलों तथा संविदा व्यवस्थाओं को स्फीति की दत्त दर के अनुरूप होने में लंबा समय लग जाता है और इसलिए सम्बंधित लोगों को बहुत कठिनाइयों तथा तनाव का सामना करना पडता है। इस प्रकार स्फीति से भारी विकृतियों, असमानताओं तथा संघर्षों का निर्माण होता है।

विकासशील देशों के लिए, सहायता के मूल्य की तथा उधारों की लागत की ऊंची ब्याज-दरों के कारण, स्फीति के गंभीर तथा प्रतिकूल परिणाम होते हैं।

अब यह बात स्पष्टत: समझ ली गई है कि स्फीति तब होती है (1) जब मांग अधिक तथा उत्पादन या माल का स्टाक कम हो, और (2) जब कम-से-कम समाज के एक वर्ग ने धन का संचय कर रखा हो या उनकी आमदनी अधिक हो जिससे कि वे लोग माल, अचल अथवा स्थावर सम्पदा (Immovable property) या सेवाओं को ऊंची दरों पर भी खरीद सकते हैं। इस प्रकार, यह समस्या काले धन से संबद्ध है या काले धन से बढ़ती है। (3) ऋण या कर्ज़ लेकर भी प्रौद्योगिकी द्वारा प्रदत्त आधुनिक वस्तुओं तथा आराम देने वाले साधनों का लाभ उठाने की इच्छा भी स्फीति उत्पन्न करने वाला एक कारक है। (4) विकासशील देशों में, स्फीति, उन वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए, जिनकी कमी होती है, धन देती है और इस प्रकार संवृद्धि होती है तथा विकास होता है और शासन विकास तथा रोजगार के हित में स्फीतिकारी प्रवृत्तियों को सहन करता है। (5) जनसंख्या वृद्धि से कुल मांग में वृद्धि होती है, जिसके कारण कीमतें बढ़ जाती हैं क्योंकि आयातों पर प्रतिबंध होते हैं तथा दूसरी अड़चने होती हैं। (6) अन्य कारक भी हैं। उदाहरणार्थ, इनमें से एक कारक है राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में राजकोषीय अनुशासन या उचित आर्थिक-व्यवस्था का अभाव।

उच्च स्फीति कैसे आरम्भ होती है ?

इस संदर्भ में यह बात याद रखना लाभजनक होगा कि प्रथम विश्व-युद्ध के पूर्व स्वर्ण मान की विद्यमानता के कारण, जो कि कागजी मुद्रा के निर्गम को तथा बैंक में जमा राशियों को ऐसे निश्चित स्तर तक सीमित करता था कि लोग स्वर्ण के लिए मुद्रा का मुक्त विनिमय कर सकते थे, मुद्रा स्थिति बड़ी हद तक नियंत्रण में थी। परिणामस्वरूप मुद्रा-पूर्ति में द्रुत वृद्धि नहीं होती थी। सन् 1920 के दशक में इसे आर्थिक विकास में बाधक माना गया तथा पश्चिम के अनेक देशों के शासन ने, जिन्हें प्रत्यावर्तन (Repatriation) तथा पुनर्वासन (Rehabilitation) के लिए निधियों की आवश्यकता थी, मुद्रा को स्वर्ण मान रिज़र्व (Gold–reserve) से असंबद्ध करके मुद्रा छाप ली। इससे मुद्रा-पूर्ति में बहुत वृद्धि हो गई जिसके परिणामस्वरूप अधिक मुद्रा कम माल खरीद सकती थी। इससे स्फीति (Inflation) उत्पन्न हुई। एक बार आरम्भ हो जाने पर मुद्रा उत्चक्र बढ़ता गया। पुन:श्च प्रथम तथा द्वितीय विश्व-युद्ध के दौरान अनेक देशों ने, विशेषत: पश्चिम के देशों ने, बेहद करंसी नोट छाप लिए। इससे मुद्रा पूर्ति (money–circulation) बढ़ गई और वृद्धि की दर बढ़ गई।

इस प्रकार यह बात स्पष्ट हो जाती है कि उच्च स्फीति मूल्य-वृद्धि मुख्यत: युद्धों, युद्धों की तैयारियों, राजकोषीय अनुशासन के अभाव, काले धन के निर्माण, अनुचित अंतर्राष्ट्रीय मुद्राप्रणाली, उपभोक्तावाद, द्रुत जनसंख्या वृद्धि, विकास की कतिपय गलत संकल्पनाओं, आर्थिक अपराध आदि से संबद्ध है तथा इन समस्याओं के लिए, जैसा कि पहले कहा जा चुका है, नैतिक तथा आध्यात्मिक समाधान आवश्यक है। इन समस्याओं तथा अन्य संबद्ध समस्याओं को हल किए बिना, स्फीति की समस्या को अलग से हल नहीं किया जा सकता। उच्च कुल मांग, मजदूरी या लाभों के लिए अधिक दावा, तथा 'उच्च मूल्य-वृद्धि'' का दुष्चक्र तब तक चलता रहेगा जब तक कि इन सभी समस्याओं का एक-साथ नैतिक समाधान नहीं होता। आध्यात्मिक समाधान के अभाव में, परिणाम यह होगा कि गंभीर आर्थिक असमानताएं पैदा हो जाएंगी, तनाव पैदा होंगे, सामाजिक उथल-पुथल होगी, मानव चरित्र का और भी पतन होगा और नैतिक स्तरों में भीषण गिरावट आ जाएगी। **ये सभी बातें एक-साथ मिलकर परमाणु बम से कम खतरनाक नहीं हैं। अनुशासन, ईमानदारी, मितव्ययिता, दूसरे लोगों का लिहाज, गरीब वर्गों के प्रति अनुकंपा, मातृत्व तथा अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की भावना ही हमें इस परिस्थिति से बचा सकती है क्योंकि यह परिस्थिति परमाणु बम से पैदा होने वाली परिस्थिति से कम खतरनाक नहीं हैं। यदि अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आर्थिक**

प्रणाली का नैतिक जीर्णोद्धार नहीं किया गया तो निकट भविष्य में गरीबी तथा स्फीति से वे अरबों लोग बिना बमों के ही मर जाएंगे जो कि गरीबी की रेखा के नीचे हैं। □□□

(24.) नैतिक तथा आध्यात्मिक निरक्षरता तथा विचारधारा का अभाव

मनुष्य कुछ बुनियादी प्रश्नों के उत्तर चाहता है। वह अपनी सामाजिक, धार्मिक, प्रजातीय, राजनैतिक तथा, सर्वोपरि, अपनी वास्तविक पहचान जानना चाहता है, अर्थात् वह पहचान जो कि इन सभी के पीछे छिपी है। वह अपनी उत्पत्ति तथा ब्रह्मांड में अपने स्थान के बारे में जानना चाहता है। वह यह भी जानना चाहता है कि क्या इस लोक के परे भी जीवन है; या कि क्या पृथ्वी के परे किसी अन्य ग्रह में जीवन है। उसमें यह जानने की उत्सुकता है कि क्या जीवन का कोई प्रयोजन या लक्ष्य है या क्या मानव जाति का इतिहास एक सुग्रथित कथा है और उसकी कोई आयोजना है या कि वह विभिन्न घटनाओं का जमाव मात्र है। इन प्रश्नों तथा ऐसे ही अन्य प्रश्नों के उत्तरों से जीवन का दर्शन निर्मित होता है। ये उत्तर सदैव मनुष्य के मन में एक दर्शन के रूप में निहित नहीं होते, अधिकांशत: वे प्रबुद्ध विश्वासों या अंधविश्वासों के रूप में होते हैं। इन विश्वासों में आपस में कोई अनुरूपता या एकता हो सकती है या इनमें कुछ आंतरिक विरोध भी हो सकते हैं। ये विश्वास सही, गलत, विकृत या किसी अन्य प्रकार के हो सकते हैं। यदि कोई मनुष्य निरक्षर हो तो भी उसके कुछ विश्वास होते हैं, ब्रह्मांड के बारे में, अपनी स्वयं की पहचान के बारे में तथा अन्य लोगों के साथ अपने संबंधों के बारे में मनुष्य के कुछ विचार होते हैं। इन विश्वासों के आधार पर बाहरी तथा भीतरी जगत् के बारे में मनुष्य के कुछ विचार होते हैं। **उसकी क्रियाएं इन्हीं विश्वासों से उत्पन्न होती हैं, जो कि उन्हें एक विशिष्ट दृष्टिकोण, अभिवृत्ति या प्रवृत्ति प्रदान करते हैं।**

यदि मनुष्य के विश्वास तथा कर्म वास्तविकता तथा विश्वजनीन नियमों के अनुरूप न हों तो एक संघर्ष (conflict) पैदा हो जाता है या असामंजस्य (Disharmony) की अवस्था निर्मित हो जाती है, जिससे कष्टों तथा अशांति की उत्पत्ति होती है। इसलिए हमारे सभी वर्तमान संघर्षों, हमारी सभी समस्याओं तथा तकलीफों का जन्म उन कर्मों से होता है जो कि गलत विश्वासों, मिथ्या विचारधारा, अज्ञान तथा संभ्रम से पैदा होते हैं।

इसलिए मनुष्य को एक अभिप्रेरक दर्शन की आवश्यकता है, जो कि आध्यात्मिक, धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा राजनैतिक विचारधाराओं से निर्मित हो ताकि मनुष्य अपने जीवन तथा अपने क्रियाकलापों को इनसे उचित ढंग से संबद्ध कर सके। यदि उसके पास इस प्रकार का आध्यात्मिक ज्ञान नहीं होगा तो उसके कर्मों से अशांति तथा पीड़ा का जन्म होगा।

कुछ लोग यह भूल जाते हैं कि मनुष्य को केवल जीवन की भौतिक वस्तुओं की ही आवश्यकता नहीं होती बल्कि उसकी आध्यात्मिक आवश्यकताएं भी होती हैं जिन्हें वह पूरा करना चाहता है। वह ऐन्द्रिय अनुभव से ऊपर की वास्तविकता को जानना चाहता है और उसमें विश्वास रखता है। अपनी आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए और एक बेहतर जीवन की तलाश में उसे एक सच्ची, पूर्ण तथा व्यवहार्य विचारधारा की आवश्यकता होती है। वह जीवन का एक दर्शन चाहता है, जिसके सहारे वह वर्तमान भौतिकवादी विश्व के अन्यायों तथा उसके स्वयं के कर्मों के नकारात्मक परिणामों को सह सके। वह एक ऐसी प्रणाली का ज्ञान चाहता है जिसके सहारे वह अपने अनुभव तथा अपने जीवन की गुणवत्ता को सुधार सके। यदि उसके पास ऐसी विचारधारा न हो तो वह भौतिकवादी, नीति-निरपेक्ष, मानवद्वेषी हो जाता है तथा वास्तविकता तथा ऐन्द्रिय अनुभव से ऊपर की आध्यात्मिक सत्ता को नहीं जान पाता। इस प्रकार के ज्ञान के अभाव को ही 'आध्यात्मिक निरक्षरता' (Spiritual Illiteracy) कहा जा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप नैतिक अपचार (Moral degeneracy) का जन्म होता है तथा मनुष्य के व्यक्तित्व में अनेक दोष आ जाते हैं। उससे नकारात्मक भावों तथा अभिवृत्तियों (Negative thoughts and traits) का निर्माण होता है। उसके कारण मनुष्य सिद्धांतों तथा मानदंडों को बिना जांचे-परखे स्वीकार कर लेता है। मनुष्य यह नहीं समझ पाता कि उसमें उच्चतर स्तरों तक पहुंचने की शक्ति छिपी है। उससे मनुष्य की तर्कना शक्ति दोषपूर्ण हो जाती है। **वर्तमान समय में अधिकांश लोग एक ऐसे वैचारिक सिद्धांत की कमी या अपर्याप्तता से पीड़ित हैं, जो कि उन्हें अपनी प्रामाणिकता तथा यथार्थता की प्रतीति करा दे, जो कि उन्हें उच्च कर्म करने के लिए अभिप्रेरित करे, जो कि उनकी आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्ति करे और उनके जीवन-विषयक प्रश्नों के सही उत्तर दे।**

हज़ारों वर्षों से जो विचारधाराएं, दर्शन, धार्मिक सिद्धांत या विश्वास विद्यमान रहे हैं उन्होंने मनुष्य को 'आत्मवादी'

(Solipsist) बना दिया है अर्थात् उसे यह भ्रांत विश्वास दिया है कि केवल 'आत्मा' ही सत्य है, प्रकृति और परमात्मा नहीं हैं जिसके फलस्वरूप मनुष्य में भावात्मक विकास की कमी है और वह अन्य लोगों के साथ संबंध स्थापित नहीं कर सकता । इससे संस्थाओं तथा संगठनों के प्रति मनुष्य में नकारात्मक अभिवृत्तियां पैदा हो गई हैं और वह सत्ता को नहीं मानता । अन्य कुछ दर्शनों ने उसे केवल भौतिकवादी बना दिया है ।

कुछ अन्य विचारधाराएं नैतिक विषयिनिष्ठतावाद (Ethical subjectivism) के सिद्धांत देती हैं जो कि अच्छाई—जैसे गुणों की वास्तविकता को नहीं मानते । ऐसी विचारधाराएं भी हैं जो कि आलोचनात्मक प्रेक्षण तथा निर्णय (Ability of critical judgement) करने की योग्यता को पंगु कर देती है । इसके परिणामस्वरूप लोग या तो यह सोचते हैं कि सभी धर्म, सभी दर्शन, सभी विचारधाराएं महत्वपूर्ण हैं या कि वे ये सोचते हैं कि सभी दर्शन, सभी धर्म, सभी विचारधाराएं महत्वहीन हैं ! ऐसे दर्शन भी हैं जो कि व्यक्तिगत पहचान (personal identity) तथा अधिकारों और कर्तव्यों की वास्तविकता को नहीं मानते । स्वाभाविक है कि इनसे अनेक समस्याएं पैदा हो जाती हैं तथा शांति भंग हो जाती है ।

इस प्रकार एक सुसंगत, सुसंबद्ध, तर्कसंगत तथा प्रेरक विचारधारा की आवश्यकता है जो कि अन्य लोगों की पहचान के मुकाबले में उसकी स्वयं की पहचान की समझ दे और नैतिकता के उच्च-स्तर पाने के लिए तथा उच्चतर इंद्रियातीत अनुभव पाने के लिए तथा उसे जीवन के उतार-चढ़ाव का सामना करने तथा आंतरिक शांति कायम रखने के योग्य बनाने के लिये उसका मार्गदर्शन करे।

धार्मिक शिक्षा से भिन्न रूप में आध्यात्मिक शिक्षा भीतरी तथा बाहरी सामंजस्य निर्मित करने की शिक्षा है । वह ऐसी शिक्षा है जो कि आत्मानुशासन प्रदान करती है । वह नम्रता तथा आंतरिक संतोष प्रदान करती है और जीवन, मृत्यु तथा मृत्यु के बाद की स्थिति की ओर विश्व तथा बाह्य विश्व की वास्तविकताओं को जानने की मनुष्य की इच्छा को पूरा करती है । वह आंतरिक शांति देती है तथा रचनात्मकता की शक्तियों का निर्माण करती है तथा नकारात्मकता तथा विनाशकारी प्रवृत्तियों पर नियंत्रण देती है।

पृष्ठ २९ का शेष

चर्चा करना तथा विश्वशांति के युग को लाना है।

बहनों तथा भाइयों, विश्व को विनाश से अर्थात् परमाणु हथियारों से उत्पन्न होने वाले संकट से या किसी भी अन्य आपदा से बचाना हमारे हाथों में नहीं है । महा-शक्तियों (Super powers) के शासनों को यह कार्य करना है। फिर भी हम सब लोग शांति की तरंगें बिखेरने, भातृत्व भावना के लिये जागृति निर्मित करने, शांति देने वाली शिक्षा का विस्तार करने और संपूर्ण विश्व के हमारे इच्छुक भाइयों और बहनों को प्रभु-चिंतन, आत्मानुभूति तथा ईश्वर के साथ संबंध के ज़रिए शांति का अनुभव करने में सहायता पहुंचाने के लिए मिल-जुलकर कार्य करेंगे । हो सकता है कि समय आने पर हम पूरे जहाज़ को डूबने से न बचा सकें किन्तु हम लोगों को पहले-से बता सकते हैं कि विश्व की स्थिति क्या है और क्या किया जा सकता है, तथा क्या किया जाना चाहिए और ईश्वर की सहायता से हम उन लोगों को, जो कि इच्छुक हैं, आध्यात्मिक दृष्टि से बचाने तथा मुक्त करने के लिए, इस विपत्ति में उन्हें सहयोग भी दे सकते हैं ।

बहनों तथा भाइयों, जब से इस संस्था की स्थापना हुई है तब से इसने बहुत उतार-चढ़ाव देखे हैं । विश्वशांति की ओर की जाने वाली यात्रा में शुद्धता, मानवीय मूल्यों, चिंतन, आध्यात्मिक प्रज्ञान, प्रेम, भातृत्व तथा सहिष्णुता का दर्शन उसका मार्गदर्शक ध्रुव तारा है । हो सकता है कि इस विषय में कुछ लोगों के भिन्न विचार हों, किन्तु हमने शांति तथा आध्यात्मिक प्रज्ञान का मार्ग चुना है । माया के वश में जाकर कुछ लोग भले ही हमारी आलोचना करें तथा हमारे मार्ग में बाधाएं खड़ी करें, फिर भी हम सभी की मित्रता पाने का प्रयास करते रहेंगे।

पृष्ठ २१ का शेष

ही अपना परम सौभाग्य मानते हैं। परन्तु इन परम सौभाग्यशाली आत्माओं ने तो 50 वर्ष प्रतिदिन भगवान से वार्तालाप करने का आनन्द प्राप्त किया। किसी महान आत्मा से बात करके भी मनुष्य कितना गौरान्वित होता है, तो भला भगवान से रूह-रिहान करके रूह कितनी आनन्दित होती होगी। इस ईश्वरीय रूह-रिहान से आत्मा को लम्बे काल तक अकथनीय आनन्द प्राप्त होता है। इस लम्बे काल की ईश्वरीय पालना में पलने वाली आत्माओं के भाग्य को कथन करना सम्भव नहीं।

अब सोचो कितनी महान हैं ये आत्माएँ। यह सत्य है कि शीघ्र ही भविष्य में इनके दर्शनों के लिए भी विश्व उमड़ पड़ेगा। समस्त विश्व के सभी कट्टर पंथियों को अपनी कट्टरता त्याग कर सत्य पथ को स्वीकार करना ही पड़ेगा। तो सभी को चाहिए कि इस सत्य में यदि सन्देह हो तो स्वयं भी समीप आकर अपने अनुभवों द्वारा इस सत्य को पहचानें।

आध्यात्मिक हल विधि: निष्कर्ष और टिप्पणी

पिछले लेखों में जो कुछ भी कहा गया है उससे यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि मानव-मन दुविधा की स्थिति में डावांडोल हो रहा है। परमाणु हथियारों, विश्व आर्थिक-प्रणाली के ध्वंस या संकट, नितान्त गरीबी का जीवन बिताने वाले लोगों की संख्या में तीव्र वृद्धि, विश्व जनसंख्या-वृद्धि की उच्च दर, पर्यावरणात्मक प्रदूषण, तनाव, नशीले पदार्थों की लत आदि के कारण हमारी सभ्यता के सामने जैसा संकट उपस्थित है वैसा इतिहास में कभी नहीं आया था। यदि इन समस्याओं के व्यष्टिक या सामूहिक परिणाम के कारण इंन्तिम त्रासदी घटित हो जाए तो हममें से कोई भी नहीं बच पाएगा, चाहे वह गरीब हो या अमीर हो, चाहे वह विकसित देश का हो या अल्प विकसित देश का हो या अविकासशील देश का हो।

जो संकट हम सभी के सामने उपस्थित है और हमें आतंकित कर रहा है वह इतिहास का एक प्रकट तथ्य है और यदि उसे—जैसे वह आगे बढ़ रहा है उसी प्रकार बढ़ने दिया जाए और हम आज भी उससे बचने के उपाय न करें तो वह शीघ्र ही सर्वनाश कर देगा। पृथ्वी सबकी है। हममें से कोई भी व्यक्ति पृथ्वी के प्रति अपने कर्तव्य से मुख नहीं मोड़ सकता।

अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य की समीक्षा करते समय तथा कुछ गम्भीर समस्याओं का उल्लेख करते समय हमने अपना विचार व्यक्त किया है तथा कहा है कि लोगों को इन समस्याओं से मुक्ति पाने का तथा एक नई विश्व व्यवस्था की स्थापना करने का जायज़ अधिकार है क्योंकि उसकी स्थापना से सभी लोगों की आकांक्षाओं की पूर्ति होगी तथा वह न्यायपूर्ण, सुरक्षापूर्ण, प्रदूषणमुक्त, युद्ध, शत्रुता तथा कलह से मुक्त विश्व होगा और प्रेम, शांति, स्वास्थ्य तथा समृद्धि से परिपूर्ण विश्व होगा, जिसमें संपत्ति तथा शक्ति केवल कुछ लोगों के हाथों में नहीं रहेगी।

हम इस विश्व-दृष्टि तथा इन विचारों में सहभागी हैं जो कि सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक या धार्मिक प्रणालियों के परे हैं।

बहनों और भाइयो, हमने विश्व की प्रधान समस्याओं का विश्लेषण करते हुए मैंने निम्नलिखित चार बातों पर जोर देने का प्रयास किया है:—

1. यह कि उनकी समस्याएं परस्पर संबद्ध हैं और उन्हें हल करने के लिए उनका निपटारा एक-साथ करना होगा। उदाहरणार्थ, विकास की समस्या नि:शस्त्रीकरण, अति-जनसंख्या, अपराध, राजनैतिक तथा आर्थिक भ्रष्टाचार के उन्मूलन की समस्या आदि से संबंधित है। **इस प्रकार समस्याएं अथवा प्रणालियां परस्पर निर्भर हैं तथा समाधान परस्पर संबद्ध हैं।**

2. यह कि सभी समस्याओं की जड़ें व्यक्तिगत या सामूहिक मानस में हैं। इसलिए समाधानों को उस स्तर पर प्रयुक्त करना होगा। इन समस्याओं को हल करने के लिए नेताओं तथा लोगों की इच्छा आवश्यक है अत्यन्त आवश्यक हैं मानवीय गुण जो आज दिखाई नहीं देते या कम दिखाई देते हैं। अब यह समझ लिया जाना चाहिए कि हमारी राजनैतिक, आर्थिक, प्रशासनिक तथा सामाजिक प्रणाली का पूर्ण पुनर्कल्पन होने पर हमें इस परिस्थिति से मुक्ति मिल सकती है। समग्रत: विकास तथा सामाजिक प्रगति में नैतिक मूल्यों का निश्चित योगदान होता है। वे एकता लाते हैं तथा विश्वशांति तथा अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव की शक्तियों को सुदृढ़ करते हैं और समाधानों के मार्ग में रुकावट पैदा करने वाली तथा विभाजन करने वाली सभी मानसिक बाधाओं को दूर कर देते हैं।

3. यह कि चूंकि समस्याएं मनुष्यों की चेतना या आत्माओं को प्रभावित करने वाली किसी प्रकार की व्याधि से उत्पन्न होती हैं, इसलिए समाधानों का सार-स्वरूप भी आध्यात्मिक होना चाहिए और इसलिए युक्तियुक्त तथा विश्वजनीन स्वरूप का ऐसा आध्यात्मिक ज्ञान आवश्यक है जो कि लोगों की अवचेतना का उपचार करे तथा उन्हें जागृत करे। आध्यात्मिक ज्ञान का आचारतत्व है ही एक-दूसरे के विरोधी शक्ति-गुटों से अलग रहना, तथा दूसरे पर प्रभुत्व पाने, दूसरों का शोषण करने या दूसरों को हानि पहुंचाने की अभिप्रेरणा वाले संकीर्ण तथा पुराने सिद्धांतों को, जो कि तनाव तथा घृणा पैदा करते हैं, अस्वीकार करना।

4. यह कि मन को प्रभावित करने वाले खिंचाव, तनाव तथा नकारात्मकता के निवारण के लिए सहज राजयोग या प्रभु-चिंतन (Meditation) आवश्यक है। ऐसी शिक्षा, जो कि आवश्यक मानवीय गुणों का संवर्धन करती है, विश्व के सभी लोगों को स्थायी शांति, सुरक्षा, तथा समृद्धि की प्राप्ति सुनिश्चित रूप से कराती है।

चूंकि ये निष्कर्ष विश्व-समस्याओं के प्रति हमारे उपागम (Approach), हमारी कार्यप्रणाली (Methodology) तथा हमारी कार्य-विधि (Strategy) को प्रभावित करते हैं इसलिए इन निरूपणों की वैधता पर जो कि "शांति का दर्शन" (Philosophy of Peace) की आधारिकाएं हैं, कुछ प्रकाश डालना आवश्यक है।

समस्याएं नकारात्मक मूल्यों से उभरती हैं

स्पष्टीकरण के उन प्रयासों से, जो कि हमने अब तक किए हैं, भले ही उनमें पुनरावृत्ति का दोष आ गया है, यह बात तो स्पष्ट हो जानी चाहिए कि समस्याओं का जन्म कुछ नकारात्मक मूल्यों के विद्यमान होने तथा कुछ सकारात्मक मूल्यों के विद्यमान न होनें से संबद्ध है । दूसरे शब्दों में, किसी समस्या का प्रार्दुभाव व्यक्तियों के किसी समूह में किसी नकारात्मक लक्षण (Negative trait) या किसी नकारात्मक मूल्य का कार्यान्वित होना है।

कोई समस्या, उसके वास्तविक स्वरूप में, मूल्य-असंवादिता (Value–dissonance) की एक घटना है । अपने सार में वह छद्म अथवा गुप्त रूप में एक नकारात्मक मूल्य है । किसी समस्या को किसी सकारात्मक मूल्य या मूल्यों के किसी समुच्चय के उल्लंघन के प्रकाश में ही देखा जा सकता है ।

किसी समस्या को राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक या कोई भी अन्य नाम देकर वह केवल उसके प्रकट रूप को या उसके लक्षणों को अभिव्यक्ति देते हैं, जबकि उसकी जड़ें निश्चय ही किसी मूल्य, किसी नैतिक सिद्धांत या किसी आध्यात्मिक नियम के उल्लंघन में होती है।

किसी समस्या की विशालता किसी नकारात्मक मूल्य की विशालता पर निर्भर होती है

न केवल किसी सकारात्मक मूल्य का उल्लंघन; या किसी नकारात्मक मूल्य का कार्यान्वयन, किसी समस्या को जन्म देता है, बल्कि समस्या की विशालता या उग्रता भी इस उल्लंघन के विस्तार पर निर्भर होती है । सामान्य लोगों या विशेषज्ञों द्वारा इन समस्याओं को जो नाम दिए गए हैं, वे हमारे ध्यान केवल लक्षणों की ओर आकृष्ट करते हैं तथा अधःस्थ कारण को, अर्थात् किसी नैतिक तथा आध्यात्मिक सिद्धांत या सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक या व्यावसायिक नीति संहिता के नियम के उल्लंघन को हमारी दृष्टि में आने नहीं देते अगर वे हमारा ध्यान उसके मूल की ओर आकृष्ट करते भी हैं तो भी वे हमारा ध्यान उसकी ओर कम आकृष्ट करते हैं ।

लक्ष्य, नीतियां तथा व्यूह रचनाएं भी मूल्यों से संबद्ध हैं

जो एक अन्य बात ध्यान देने योग्य है, वह यह है कि जब सामाजिक, राजनैतिक या आर्थिक नीतियां अथवा कार्य-विधि (Strategy) तैयार की जाती हैं तो मूल्य (Values) ही लक्ष्य निर्धारित करने में, प्रयास की दिशा निर्धारित करने में तथा आयोजना (Planning) या नीति के क्रियान्वयन की रीति निर्धारित करने में अपना महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करते हैं। वस्तुतः, जब राजनीतिज्ञगण, अर्थशास्त्रीगण तथा समाज के नेतागण कोई राजनैतिक भाषण देते हैं या कोई आर्थिक आयोजना या किसी सामाजिक योजना की कोई घोषणा प्रस्तुत करते हैं और उसके क्रियान्वयन के लिए लोगों को प्रेरित करते हैं तो सदैव कोई मूल्य ही उन सभी को संगठित करने में निर्मित होता है । उदाहरणार्थ जब कॉर्ल मार्क्स ने अपना आर्थिक सिद्धांत दिया तो उन्होंने कहा कि समाज की आर्थिक बुराइयां, सामाजिक अन्याय, उत्पादन के फलों के **असमान वितरण** (Unequal distribution), मनुष्य की स्वार्थपरता, धनियों के स्वार्थ और उनके द्वारा किये जाने वाले **शोषण** तथा सामंतों या बुर्जुआ वर्ग द्वारा बुरी या **अनैतिक प्रणालियां** अपनाई जाने के कारण पैदा हुई थीं। जब उन्होंने अपनी कार्य-विधि निर्धारित की तो उन्होंने गरीब लोगों को **एक हो जाने** का आहवान दिया । अब, यदि **अन्याय, असमानता, शोषण** तथा **स्वार्थपरता** मूल्य (नकारात्मक मूल्य) नहीं है तो और क्या है ? यदि **एकता**, जो कि उनको संगठित या व्यूहीकृत के लिए नारे के रूप में दी गयी है, और **समानता** (आर्थिक स्थिति की समानता), जिसे उन्होंने अपने लक्ष्य के रूप में प्रतिपादित किया, मूल्य नहीं है तो फिर उन्हें क्या कहा जाए ? स्पष्ट है कि कॉर्ल मार्क्स ने कुछ मूल्यों पर लोगों का ध्यान आकृष्ट कर लोगों को कार्यवाई करने का आहवान दिया, भले ही जिस शब्दावली का उन्होंने उपयोग किया था वह अर्थशास्त्र नामक शैक्षिक शाखा से व्युत्पन्न थी ।

इसी प्रकार, जब कोई राजनीतिज्ञ राष्ट्रीय एकता पर या समस्याओं को **मैत्रीपूर्वक** तथा **बिना-हिंसा** के सुलझाने पर भाषण देता है तो वह राष्ट्रीय **एकता, अहिंसा** तथा **मैत्री** के मूल्यों की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट करके उन्हें कार्यवाई के लिए आहवान देता है । इसलिए, इस प्रकार विचार करने पर, ऐसे सभी राजनैतिक या आर्थिक भाषण जिनमें लोगों को किसी समस्या को हल करने हेतु कार्यवाई करने का आहवान दिया जाता है, अंशतः आध्यात्मिक प्रवचन होते हैं भले ही उनके पीछे किसी आध्यात्मिक नेता की सत्ता और शक्ति नहीं होती ।

अब तक यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि समस्याओं का जन्म तथा उनका अपना-अपना समाधान मूल्यों से निश्चित रूप से संबद्ध है तथा शांति, प्रगति और विकास मूल्य ही पर आधारित हैं । दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि आध्यात्मिक गुणों या शुद्धता तथा अभिप्रेरणाओं, संबंधों तथा व्यक्तिगत, पारस्परिक संस्थागत तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यवहार में मूल्यों की सकारात्मकता के अभाव में शांति नहीं हो सकती । इसलिए विश्व की समस्याओं का मुख्य और आरम्भिक हल है—आध्यात्मिक जागृति के ज़रिए मूल्यों का कार्यान्वयन ।

आध्यात्मिक हलों के अतिरिक्त लाभ

अब इस सत्यता को समझा जा सकता है कि वर्तमान समय में संकट के, विशेषत: संकट के बाह्य लक्षणों पर ध्यान देने तथा उनका ही उपचार करने की प्रवृत्ति है । भावनाओं को नियंत्रित करके तथा मूल्यों का कार्यान्वयन करके संबंधों तथा व्यवहार को सुधारने के कोई भी गम्भीर प्रयास नहीं किये जा रहे हैं ।

इस सिलसिले में यह उल्लेखनीय है कि जबकि आज अपनाए जा रहे हल तथा उपाय एक समस्या को हल करने का प्रयत्न करते हैं तो अन्य समस्याएं पैदा हो जाती हैं । **परंतु मूल्यों के कार्यान्वयन का जो हल हमने सुझाया है वह अन्य समस्याओं को नहीं उभारेगा क्योंकि उससे एक समस्या सफलतापूर्वक हल हो जाएगी ।**

द्वितीयत:, आज अपनाए जा रहे अन्य प्रकार के हल जब तक वे क्रियान्वित किए जाते हैं तब तक वे अपर्याप्त हो जाते हैं क्योंकि इस बीच अन्य समस्याएं पैदा हो जाती हैं जो कि इस समाधान को निष्प्रभावी कर देती हैं । **परन्तु, मूल्य-कार्यान्वयन के ज़रिए अभिप्रेत हल के मामले में ऐसा नहीं होगा ।**

पहले हमने जो निरूपण तथा निष्कर्ष दिये हैं उनमें हमने यह भी कहा है कि अनेक समस्याएं परस्पर संबद्ध होती हैं । यह परस्पर संबंध उनके खंड समाधान (piece–meal solution) को लगभग निष्प्रभावी बना देता है क्योंकि एक संकट दूसरे संकट पर क्रिया करता है या दूसरे संकट पर जीवित रहता है । इसलिए, उन्हें हल करने के लिए हमें उनकी संयुक्त उपस्थिति पर ध्यान देना होगा । उदाहरणार्थ, 'विकास' की समस्या को लें । वह मात्र विकास की समस्या नहीं है। यह कहना बेहतर होगा कि वह ''अति-जनसंख्या—आयुध स्पर्धा-शोषण-गरीबी-अज्ञान'' की जुड़ी हुई समस्या है । इसलिए वह कहीं बड़ी समस्या है और किसी एक मानव अभिकरण (Human agency) के लिए इन सभी समस्याओं तथा अनेक अन्य समस्याओं को एक-साथ हल करना और उनका कोई पर्याप्त हल ढूंढ़ना असम्भव है । किन्तु, हमें यह समझ लेना चाहिए कि आध्यात्मिक हल या मूल्यों के कार्यान्वयन में इन समस्याओं को एक-साथ हल करने की क्षमता है । यह कार्य खर्चीला नहीं है और कोई एक मानव अभिकरण भी विश्व-व्यापी सहभागिता सहायता और सहयोग को आमंत्रित करके यह कार्य शुरू कर सकता है।

आइए, इसलिए हम परमाणु हथियारों के ज़रिए समस्या निवारण की बात न करें बल्कि प्रेम के आध्यात्मिक हथियार के ज़रिए समस्या निवारण की बात करें । आइए, हम केवल भौतिक गरीबी की ही चर्चा न करें बल्कि उसके साथ आध्यात्मिक गरीबी-संपन्न राष्ट्रों की भी आध्यात्मिक गरीबी—की चर्चा करें । इसके पहले कि हम समस्याओं के लक्षणों के हल ढूंढ़ने की बात करें, आइए, हम सर्वप्रथम स्वार्थपरता, असहानुभूति, घृणा तथा हिंसक प्रवृत्तियों के उन्मूलन की बात करें क्योंकि यही नकारात्मक मूल्यों का वह कोड़ (core) है जहां से लगभग हर समस्या पैदा होती है।

इस कार्य के लिए एक आध्यात्मिक विश्वविद्यालय की आवश्यकता है, जो कि विश्वजनीन ज्ञान प्रदान करे तथा विश्व-व्यापी चेतना का निर्माण करे । एक आध्यात्मिक संयुक्त राष्ट, (Spiritual U.N.) हमारे समय की अत्यावश्यकता है । आध्यात्मिक विश्वविद्यालय, आध्यात्मिक संयुक्त राष्ट्र भी हो, जो कि समाज के सभी वर्गों—वैज्ञानिकों, न्यायविदों, प्रचार माध्यमों के लोगों, शिक्षाविदों, महिलाओं, सरकारी अधिकारियों, राजनीतिज्ञों, युवाओं तथा अन्य लोगों की बैठकें आयोजित कर सके जिनसे ऐसी परस्पर क्रियाएं प्राप्त हों जिनसे एकता, प्रेम और सहयोग उत्पन्न हो । ऐसा आध्यात्मिक विश्वविद्यालय हमारे समय की अत्यावश्यकता है । विद्यमान संयुक्त राष्ट्र को तो अपना कार्य जारी रखना है किन्तु आध्यात्मिक संयुक्त राष्ट्र को उसकी अनुपूर्ति तथा सहायता करनी होगी ताकि संयुक्त राष्ट्र में जो भी चर्चा हो उसे एकता, सहानुभूति तथा सहयोग की भावना से क्रियान्वित किया जाए।

प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय यह शिक्षा प्रदान कर रहा है, वह इस सिद्धांतों तथा लक्ष्यों पर अटल है तथा अपनी आध्यात्मिक व्यूह रचना के ज़रिए आज की अंतर्राष्ट्रीय समस्याओं के समाधान में रचनात्मक योगदान दे रहा है । इस सम्मेलन का उद्देश्य भी विश्व समस्याओं के ऐसे समाधानों पर

(शेष पृष्ट २६ पर)

सतयुगी श्रेष्ठ राज्यसत्ता के आधारभूत सिद्धांत

बी.के. रमेश गामदेवी—बंबई

इतिहास हमें बहुत बातें सिखाता है—चाहे वो व्यक्ति विशेष के जीवन से या सामाजिक जीवन से संबंधित हो। व्यक्तियों के अनेक कर्त्तव्यों के आधार से समाज की अनेक व्यवहारिक जीवन की बातों का निर्माण होता है। और इन सब व्यवहारिक और सामाजिक बातों के आधार पर इतिहास बनता है। शासन करने वालों का जीवन अध्ययन करने से और उन्होंके द्वारा की गई गफ़लतों या भूलों के द्वारा अन्य सभी सीखने का प्रयत्न करते तो आज का इतिहास कुछ और होता। भूतकाल की बातों के आधार पर वर्तमान अच्छा बन सकता है। संगमयुग में तो हम यह भी जानते हैं कि अब हम नई सृष्टि का निर्माण करते हैं। इसलिये भूतकाल के इतिहास का अध्ययन ज़्यादा ज़रूरी है क्योंकि जिन बातों के आधार पर कलियुग आया या समाज में तमोप्रधानता बढ़ी उन सब बातों को अपने व्यक्तिगत जीवन तथा सामाजिक जीवन से दूर करने का पुरुषार्थ करना चाहिये।

राजसत्ता का इतिहास अर्थात् राजसत्ता द्वारा किये गये व्यवहार से हम अनेक बातें सीख सकेंगे। आज आतंकवाद, हिंसा आदि बढ़ रही है। नेताएं अपनी सुरक्षा के लिये देश विदेश में अनेक प्रकार के सुरक्षा के साधन अपना रहे हैं। तब प्रश्न उठता है सतयुगी राजसत्ता और वर्तमान राजसत्ता के ध्येय में क्या फर्क है—व्यवहार में क्या अंतर है जिससे दो ध्रुवों जितना अंतर दोनों प्रकार की राजसत्ता में है। सतयुगी, त्रेतायुगी राजसत्ता 2500 वर्ष तक चलती है और आज की अल्पकाल की प्राप्तिवाली राजसत्ता कभी-कभी 2-4 वर्ष भी सुचारू रूप से नहीं चल पाती।

इतिहास, 'गलती ना करो', ये सावधानी देता है। परंतु जो गल्ती हो जाती है उसीको सुधारने का अवसर बहुत कम देता है। अर्थात् इतिहास में "तो" शब्द को स्थान नहीं। वाटरलु के मैदान में, युद्ध के दिन, सम्राट नेपोलियन ने अपनी सेना का ⅓ हिस्सा अन्य स्थान पर भेज दिया और बाकी ⅔ हिस्से से युद्ध किया और हार गया। उसने ⅓ हिस्सा न भेजा होता "तो" विश्व का इतिहास कुछ और होता। इसी गलती को सुधारने का मार्जिन नहीं। ऐसी अनेक बातें हैं। लेनिन साइबेरिया से मास्को की तरफ भाग रहा थ। ज़ार (राजा) के सैनिक उसको पकड़ने के लिये आ रहे थे। लेनिन वृक्षों के पत्तों का अपने ऊपर ढेर बनाकर छिप गया। सैनिकों ने चारों ओर भालों से मारने का प्रयत्न किया। लेनिन के शरीर के आगे पीछे उन तीक्ष्ण भालों का प्रहार हुआ लेकिन लेनिन के शरीर को उन भालों के प्रहारों से कोई भी प्रकार की हानि न हुई। भालों के प्रहार से पत्ते हिले लेकिन लेनिन का शरीर उन्हें दिखाई न पड़ा। सैनिक चले गये, लेनिन बच गया और साम्यवाद स्थापन हो गया। अगर लेनिन ना बच पाता **तो** ? तो रशिया से राज्यसत्ता खत्म न होती किंतु **'तो'** को इतिहास में स्थान नहीं।

इसी कारण इतिहास को सीखना, समझना ज़रूरी है। सतयुगी, त्रेतायुगी राजसत्ता के महाराजाओं से क्यों ऐसी गलती नहीं होती जिसके परिणामस्वरूप 2500 वर्षों तक अखंड राज्य चला। कुछ ऐसे सिद्धांतों का पालन होता है जिसके परिणामस्वरूप दीर्घकाल तक—दो युगों तक वह राजसत्ता चली।

शिवबाबा ने पहिला सिद्धांत बताया है—वह है अखंड राजसत्ता। आज के विश्व में राजसत्ता अखंड नहीं—खंडित स्वयं है और सदा टुकड़ों का निर्माण करती है। अंग्रेज़ी में कहते हैं वर्तमान में है 'Devide and rule' (फूट डालकर राज्य करना) और सतयुग में है 'Unite and rule' अर्थात् कलियुग में विभाजन द्वारा राजसत्ता टिकाना और सतयुग में है एकता द्वारा अखंड राजसत्ता । द्वापरयुग से इस अखंडता का भंग हुआ, धर्मसत्ता और राजसत्ता अलग-२ हाथों में हुई। इसी कारण दोनों सत्ताओं के बीच में संघर्ष हुआ। इतिहास सिखाता है कि प्रारंभ में धर्मस्थापक भी राजकुल के थे। इस्लाम धर्म के अब्राहम, यहूदी धर्म के स्थापक मोसिस, बौद्ध धर्म के स्थापक गौतम बुद्ध, जैन धर्म के स्थापक महावीर जी ये सब राजकुल के अर्थात् राजकुंवर थे। सामान्य परिवार से धर्मस्थापक ईसा मसीह, सिक्खों के गुरू नानकदेवजी, आदि बाद में हुए। यह बात भी बहुत समझने की है—धर्मस्थापक राजाई कुल के होने से क्या फायदा और सामान्य परिवार से हो तो क्या फायदा ?

यह विभाजन करने की प्रक्रिया अनेक रूपों से आगे बढ़ती गई। अंग्रेजों ने भारत में राजसत्ता टिकाने के लिये यह विभाजन करने की कला प्रयोग में लाई और हिन्दुस्तान एवं पाकिस्तान का निर्माण हुआ। विभाजन से शांति और सुख नहीं मिलता बल्कि दु:ख अशांति का ही निर्माण सदा हुआ है। यह बात भारत के विभाजन द्वारा सिद्ध हुई। विभाजन से अल्पकाल की प्राप्ति होती है परंतु दीर्घकाल के लिये सुखशांति नहीं मिलती। भाषाभेद के आधार पर भारत में सरकार ने राज्यों का गठन किया। भाषा के नाम पर अनेक बातें उत्पन्न हुईं। भाषाभेद से अखंडता नहीं रही। आज विश्व में अनेक भाषाएं है। उसीके कारण अनेक प्रकार का विभाजन है। इसके बीच शिवबाबा ने एक अभिनव प्रयोग किया,एक धर्म, एक भाषा, एक परिवार और एक राजसत्ता स्थापना की। सब प्रकार के टुकड़ों को शिवबाबा ने मिटाया। हद के सभी धर्मों के स्थान पर देवी-देवता धर्म की एकता जो बाद में सतयुग में शांति स्वधर्म और अहिंसा परमोधर्म के नाम पर 2500 वर्ष तक देवता और क्षत्रिय धर्म-वर्ग के रूप में चलेगी। धर्म की एकता—Unity के कारण राजसत्ता और कारोबार अखंड रूप से चला। भाषा भी एक रखी। हिंदी भाषा—जिस तन में शिवबाबा ने प्रवेश किया उसी तन की भी मातृभाषा हिंदी नहीं थी। तन की मातृभाषा न होते भी हिंदी भाषा को माध्यम बनाकर एक क्रांतिकारी समझ सब में लाई—सबको अपनी भाषा का ममत्व मिटाना है। सबको हिंदी सीखनी पड़ेगी। और सब हिंदी प्रेम से सीखते हैं। कोई भी प्रकार की जबरदस्ती यहां बाबा करते नहीं। भाषांतर होता है फिर भी हरएक की दिल है बाबा की मूल भाषा हम सीखें।

एक परिवार की भावना भी बाबा ने निर्माण की। राष्ट्रप्रेम भेद निर्माण करता है। किंतु इस दैवी परिवार में राष्ट्रभेद नहीं। अभी-२ दादीजी जब विदेश गईं तब हमारे विदेशी बहन भाइयों ने कहा कि दादी—हमको विदेशी क्यों कहा जाता ? दादीजी ने यह बात जब बंबई में अपने अनुभव में बताई तब मैंने कहा विदेशी अर्थात् WE देशी अर्थात् (WE यानि हम) हम सब देशी हैं। मधुबन हम सबका घर है इस सिद्धांत के द्वारा अनेक देशों में या स्थानों में रहते भी एकता निर्माण होती है, यह बहुत बड़ी बात है। दुनिया में स्थानभेद के कारण अखंडता नहीं होगी। अंग्रेजों की राजसत्ता के बारे में कहा गया—उन पर कभी सूर्यास्त नहीं होता था। इतनी विशाल राजसत्ता होते हुए भी वह राजसत्ता रंगभेद, स्थानभेद, राष्ट्रभेद दूर नहीं कर पाई। और इन भेदों के कारण ही उनकी राजसत्ता आहिस्ते-२ अनेक देशों से विलीन होती गई। यह बात सिद्ध करती है कि अगर अनेक देशों का भेद रहे गया तो सतयुग में अखंड विश्व-महाराजन की विश्व सत्ता नहीं होगी। शिवबाबा ने अनेक राज्यों के अंदर विभाजित विश्व में एकता लाई। आज का संयुक्त राष्ट्रसंघ भी यह कार्य नहीं कर सकता है, जो कार्य शिवबाबा करते हैं, एकता के आधार पर अखंडता स्थापन करना। राष्ट्रभेद तो क्या शिवबाबा तो खंड भेद भी मिटाते हैं। आज विश्व जो भूगोल के हिसाब से 5 खंडों में विभाजित है। यह भेद भी न रहे उसी कारण वहां है अखंड राजसत्ता। और उसी कारण वह है विश्व महाराजन की राजसत्ता।

आज के विश्व में राज्यसत्ता सामान्य मनुष्यों के हाथों में है। समाजवाद के कारण यहां पर पक्ष है। अनेक पक्ष हैं, उसी कारण स्वार्थ सबके अलग है। स्वार्थ के कारण लक्ष्य भेद भी रहता है। लक्ष्यभेद के कारण ही राज्य व्यवस्था के अनेक रूप हैं जैसे समाजवाद, साम्यवाद, पूंजीवाद आदि-२। यह विभाजन या अनेकता कितनी भयानक है—जिसके परिणामस्वरूप अणुयुद्ध आदि का खतरा सारे विश्व में चल रहा है। सिद्धांत भेद के कारण निर्माण हुई परिस्थिति कितनी भयानक है जिससे आज मानव का अस्तित्व खतरे में हो गया। और फिर इस विभाजन का खर्चा कितना ? संयुक्त राष्ट्र का अनुमान है कि प्रति मिनिट विश्व के सभी राष्ट्र अस्त्र-शस्त्रों आदि पर 1.5 बिलियन डॉलर खर्च करते हैं। लोग कहते हैं एकता और अखंडता महंगी है। और आज के विश्व की परिस्थिति तथा खर्च का अंदाज़ा सिद्ध करता है कि इस विभाजन द्वारा राज्य कारोबार चलना कितना महंगा और खतरेवाला है। अस्त्र-शस्त्र पर जो खर्च होता है वह अगर शांति और प्रेम के आधार पर आपसी उद्धार अर्थात् गरीबी दूर करने में व्यय होता तो विश्व आसानी से स्वर्ग होता। गरीबी का कारण है यह आज की विभाजित राज्यसत्ता अर्थात् एकता और अखंडता का अभाव। परिस्थिति इतनी बिगड़ी है कि अब यह एकता का निर्माण करना असंभव हो गया है। लीग आफ नेशन्स तथा वर्तमान संयुक्त राष्ट्र संघ जिस शुभ कामना और भावना के आधार पर रचे गये वह कार्य शिवबाबा करनकरावनहार करा रहे हैं हम बच्चों को निमित्त बनाकर। और इस दृष्टि से देखा जाए तब शिवबाबा के इस विश्व परिवर्तन के कार्य का मूल्य हम सब समझ सकेंगे और तब हम तीव्र पुरुषार्थी बनकर इस विश्वसेवा के कार्य में लगेंगे।

आध्यात्मिक सेवा समाचार

□ब्र.कु. लक्ष्मण तथा ब्र.कु. सत्यनारायण, कृष्णा नगर, देहली, द्वारा संकलन

कटक: जन-जन को स्वर्णिम युग का आगमन का शुभ संदेश देने हेतु तेलंगा बाजार सेवाकेंद्र द्वारा ''स्वर्णिम युग शांति मेला'' का आयोजन किया गया। यह मेला 23 दिसम्बर से 2 जनवरी तक चला। ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय की मुख्य प्रशासिका दादी प्रकाशमणि जी तथा पूर्वी क्षेत्र की संचालिका दादी निर्मल शांता जी द्वीप प्रज्ज्वलित कर इस मेले का शुभ उद्घाटन किया। उद्घाटन समारोह के शुभ अवसर पर उड़ीसा हाईकोर्ट के न्यायाधीश भ्राता रथ जी, उड़ीसा राजस्वमंत्री भ्राता जे.आर. पटनायक जी, आदि प्रमुख व्यक्ति पधारे थे। 1500 भाई-बहनों ने योग-शिविर किया। ज्ञान-शिविर करने के पश्चात् 100 भाई-बहन क्लास करने के लिए आते हैं। मेले का समाचार अनेक समाचार-पत्रों में व रेडियो में प्रसारित किया गया। □

दिल्ली (कृष्णा नगर): सेवाकेंद्र की ओर से 3 जनवरी से 11 जनवरी तक ''विश्व एकता स्वर्णिम मेला'' का आयोजन गीता कॉलोनी रामलीला ग्राउंड में आयोजित किया गया था। यह मेला एक विशाल शोभा-यात्रा, सुंदर झांकियों एवं बैंड के साथ शुभारम्भ किया गया। इस मेले का उद्घाटन ब्र.कु.ई.वि.वि. दिल्ली जोन की संचालिका ब्र.कु. हृदय मोहिनी जी व दिल्ली की उपमहापौर बहन अंजना कंवर जी ने बड़े उत्साह के साथ किया। इसके अलावा योग-शिविर कक्ष का उद्घाटन भ्राता कटारिया जी व भ्राता दर्शन कुमार बहल जी द्वारा किया गया। इस मेले को लगभग 50000 आत्माओं ने देखा तथा 600 आत्माओं ने योग-शिविर किया। ईश्वरीय संदेश विभिन्न प्रकार के बैनर्स, पोस्टर्स द्वारा जन-जन को दिया गया। मेले का समापन समारोह ब्र.कु.ई.वि.वि. की अतिरिक्त प्रशासिका दादी जानकी जी द्वारा स्नेह-मिलन के साथ सम्पन्न हुआ। □

मैरहवा-बुदवल (नेपाल): नेपाल नरेश जी 5 महाराजधिराज वीरेंद्र वीर विक्रम शाह देव सरकार के 42वें शुभ जन्मोत्सव के उपलक्ष्य में एक विशाल भव्य झांकी ''शांति के फरिस्ते'' पर निकाली गयी। नगर जुलूस के अंतर्गत स्कूल कालेज संघ संस्था मिलिट्री एवं वरिष्ट कर्मचारी के साथ विश्वविद्यालय ने भी भाग लिया। □

चित्रकूटधाम्: कर्वी सेवाकेंद्र से समाचार मिला है कि दिनांक 13, 14, 15 जनवरी को स्थानीय रामलीला भवन में एक आध्यात्मिक प्रदर्शनी तथा प्रवचनों का आयोजन किया गया। प्रदर्शनी का उद्घाटन स्थानीय अपर ज़िला अधिकारी भ्राता चंचल तिवारी जी ने दीप प्रज्ज्वलित कर किया। इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि स्थानीय अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश भ्राता श्याम बाबू जी वैश्य रहे। □

भुवनेश्वर: समाचार मिला है कि उड़ीसा राज्य के डिप्टी मिनिस्टर बहन परमापुजारी जी, भ्राता डमरूधर वल्का जी सेवाकेंद्र पर पधारे। उन्होंने ब्रह्माकुमारी बहनों के साथ लगभग दो घंटे तक ज्ञान-चर्चा करने के पश्चात् खुश होकर कहा कि—''यह आध्यात्मिक विश्वविद्यालय अनेक मानवों के मन में सच्ची सुख-शांति लाने का महान कार्य कर रहा है। सचमुच इनका जीवन इनका कार्य सराहनीय है।'' □

जूनागढ़: प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय के जूनागढ़ सेवाकेंद्र के नवनिर्मित भवन ''शिवशक्ति भवन'' का उद्घाटन महोत्सव दिसम्बर मास में मनाया गया। आबू पर्वत से विद्यालय की संयुक्त मुख्य प्रशासिका दादी जानकी जी द्वारा उद्घाटन महोत्सव मनाया गया। दादी जी के आगमन पर एक मुख्य व्यक्तियों का स्नेह-मिलन रखा गया। □

18 जनवरी के कार्य का सेवा समाचार

पटना: सेवाकेंद्र की ओर से 18 जनवरी पिताश्री जी का स्मृति दिवस पवित्रता और शांति दिवस के रूप में मनाया गया जिसमें मुख्य अतिथि भ्राता सरजू मिश्र जी बिहार सरकार के मंत्री पधारे। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि आज समाज को जो चरित्र-निर्माण के बुनियाद की आवश्यकता है वह कार्य यह संस्था कर रही है। स्वामी वेदानंद जी, डॉ. श्याम नारायण आर्य जी ने भी अपने सुंदर विचार सुनाये। □

बम्बई (मुलुंद): प्रजापिता ब्रह्मा-बाबा की 18वें दिव्य स्मृति के निमित ''विश्व एकता आध्यात्मिक पदयात्रा'' का आयोजन किया गया। इस पदयात्रा के अंतर्गत ब्रह्मा-बाबा की दिव्य झांकी अविनाशी ज्ञान यज्ञ के साथ रखी गई थी। इसके अतिरिक्त मुलुंद कालोनी में ''विश्व एकता आध्यात्मिक सम्मेलन'' का आयोजन किया गया था। इस सम्मेलन का उद्घाटन माननीय भ्राता रामपंजवाणी जी ने किया। उन्होंने अपने वक्तव्य में संस्था की सराहना करते हुए कहा कि ईश्वरीय स्नेह, पवित्रता और दिव्यता भरा जीवन देखकर मुझे ऐसी प्रेरणा मिली कि मैं भी इन्हीं जैसा जीवन व्यतीत करूं। □

शिवसागर: समाचार मिला है कि असम सरकार की तरफ से वोर्डिंग फील्ड में ''आसाम '86'' का आयोजन एक बड़े मेले के रूप में किया गया। इस मेले में अपनी तरफ से भी ''राजयोग विश्वशांति आध्यात्मिक प्रदर्शनी'' का एक स्टॉल लगाया गया। इस प्रदर्शनी का उद्घाटन ए.जी.पी.•के प्रेसीडेंट भ्राता जितेन गोसांई द्वारा सम्पन्न हुआ। □

दिल्ली (खारी बावली): सेवाकेंद्र की ओर से फतहपुरी लक्ष्मी नायारण धर्मशाला में राजयोग प्रदर्शनी 10 दिन के लिए लगाई गई जिसका उद्घाटन भ्राता महावीर बंसल जी द्वारा किया गया। दैनिक हिंद-व्यापार के सम्पादक भ्राता आनंद प्रकाश सिंघल जी भी पधारे। इस प्रदर्शनी से विशेषकर व्यापारी-वर्ग ने लाभ उठाया। □

कलकत्ता (रॉयवेगन स्ट्रीट): जन-जन को ईश्वरीय संदेश प्रदान करने हेतु पश्चिम बंगाल के प्रसिद्ध शांति निकेतन में पौष मेला के उत्सव पर ''विश्वशांति आध्यात्मिक प्रदर्शनी'' का आयोजन किया गया। इस मेले को एवं कवि रवींद्रनाथ टैगोर की कर्मभूमि को देखने हेतु बंगाल के असंख्य जनसमूह पधारे।

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, प्रकाशक तथा सम्पादक ने 'ओमशांति प्रेस' बी-7/27, कृष्णानगर, देहली-51 से छपाया। मुख्य सम्पादक ब्र.कु. जगदीश चंद्र हसीजा
Regd. No. 10563/65-D. (E)—70